योगवाणी

वर्ष ५१, अप्रैल २०२६

योगवाणी

वर्ष ५१, अप्रैल, २०२६

आर.एन.आई. २९०७५/७६

''मानव जीवन में योग की साधना की परम उपयोगिता सहज सिद्ध है। योग ही एक ऐसा निरपेक्ष साधन मार्ग है जिसके आश्रय में सर्व सामान्य को जीवन की व्यावहारिकता और सच्चिदानन्द स्वरूप का ज्ञान सुलभ होता है''

राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

वार्षिक सदस्यता : १२५/-
द्विवार्षिक सदस्यता : २५०/-
पंचवार्षिक सदस्यता : ६००/-
आजीवन सदस्यता : १२००/-
एक प्रति का मूल्य : १५/-

मुद्रक:
मोती पेपर कनवर्टर्स
डी-4/1, सेक्टर 13
गीडा, गोरखपुर
दूरभाष : 0551-2580093

विषयानुक्रम

पृष्ठ

जीवनामृत

श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः ०२
योगामृत ०३
गोरखवाणी ०४
राशियों का मासफल ०५

नाथपन्थ एवं दर्शन

कायशोधन और यौगिक षट्कर्म ०७
- योगी आदित्यनाथ
नवनाथ कथा ०९
गोरक्षनाथ के योग का स्वरूप- १०
- डॉ० उमा सिंह

धर्म, संस्कृति एवं अध्यात्म

हनुमान : विरुद्धों का महासामंजस्य और विराट चेतना का विस्तार १४
- प्रो रजनीश कुमार शुक्ल
देवी के कामराज नामक बीजक मन्त्र क्ली की गाथा १८
- आचार्य नवनीत
युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी की हिन्दुत्व अवधारणा २४
- डॉ० राकेश कुमार तिवारी
रामायण और महाभारत में वर्णित सूर्योपासना- २७
- डॉ० धर्मेन्द्र मौर्य
अहिल्याबाई होल्कर २९
- डॉ० अर्चना शुक्ला
अन्तःकरण शुद्धि का महापर्व है नवरात्र ३२
- डॉ० अभिषेक कुमार उपाध्याय

चतुर्थ आवरण

मस्तिष्क को शक्ति देता है केला
- डॉ० प्रमोद कुमार सोनी

॥ ॐ नमो भगवते गोरक्षनाथाय ॥

योगवाणी

(धर्म-संस्कृति, अध्यात्म एवं योग प्रधान मासिक पत्रिका)

संस्थापक-सम्पादक

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ

प्रधान-सम्पादक

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ

प्रबन्ध-सम्पादक

डॉ. प्रदीप कुमार राव

सम्पादक

डॉ. प्रांगेश कुमार मिश्र

प्रकाशक

श्री गोरखनाथ मन्दिर

गोरखपुर - २७३०१५

web: www.gorakhnathmandir.in

E-mail: yogvanigmndr@gmail.com

दूरभाष : (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४

9452569717, 8858861353

॥ श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः ॥

लसद्दण्डदोर्द्दण्डसन्दीपिताशं,
जटामण्डलामण्डितोच्छीर्षमीशम् ।
जरोत्फाटिके स्फाटिके सन्दधानं,
सुगोरक्षगोरक्षनाथं नताः स्मः ॥१॥

तडित्पातचञ्चन्नवीनाम्बुदाभां,
वसानं मृगेन्द्रत्वचं चन्द्रभासम् ।
विभूत्या सभूत्याच्छटाच्छन्नवह्निं,
सुगोरक्षगोरक्षनाथं नताः स्मः ॥२॥

करेऽलाबुपात्रं स्मरोद्रिक्तगात्रं,
दधानं प्रधानं सुधाधानपात्रम् ।
स्फुरड्डाकिनीवीरवेतालदात्रं,
सुगोरक्षगोरक्षनाथं नताः स्मः ॥३॥

यशःपूरकर्पूरसम्पूरिताशं,
चरद्भूचरीसिद्धमुद्राविलासम् ।
लसत्खेचरीध्वस्तकालैकपाशं,
सुगोरक्षगोरक्षनाथं नताः स्मः ॥४॥

(गोरक्षभुजङ्गप्रयाताष्टकम् १-४)

योगामृत

गोरक्ष उवाच :-

गुरूजी ! पाँव बिना कौन मारग ? चक्षु बिन कौन दृष्टि ?
कर्ण विन कौन श्रवण ? मुख बिन कौन शब्द ? ॥८५॥

भावार्थ- हे गुरु ! इन्द्रिय विष रहित व्यवहृत कार्य कौन है। जैसे-पाँव बिन मार्ग, नेत्र बिना दृष्टि, कानों के बिना सुनना और मुख के बिना बोलना।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू । पाँव बिन विचार मार्ग, चक्षु बिन निरन्तर दृष्टि।
कर्ण बिन श्रुति श्रवण, मुख बिन लय शब्द ॥ ८६ ॥

भावार्थ- हे शिष्य ! विचार मार्ग पांव बिना है, अन्तस्थ ज्योति चक्षु बिना है। अन्तर्नादमध्य गूंज सुनने की क्रिया कानों बिना है, अन्तः करण की लौ ही बिना मुख के शब्द है।

गोरक्ष उवाच :

गुरूजी ! कौन सी धौति ? कौन सो आचार ?
कौन सो जाप मन तजै विकार ?
कौन भावते मन निर्भय रहे? सतगुरू होय सो बुझाय कहे ॥ ८७ ॥

भावार्थ- हे गुरु ! अन्तःस्थ मल को कौन धोता है? आचार कौन है? किस जप से मन की शुद्धि होती है? किस भाव से मन निर्भय रहे।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू ! ध्यान सो धौती, ब्रह्म सो आचार, अजपा जाप मन तजे विकार।
आत्मभावते निर्भय रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे ॥८८॥

भावार्थ- हे शिष्य ! मल विक्षेपादि अन्तस्थ दोषों को निवारण करने वाला ध्यान है, विचार ही उत्तम आचार संहिता है। मानस (सुरति स्वासा एवं मन के एकीकरण से किया गया) जप ही मन को शुद्ध करता है। अनुभव स्थिति में निर्भय रहना चाहिये।

(गोरक्ष-मत्स्येन्द्र संवाद)

गोरखवाणी

अलख विनांणी दोइ दीपक रचिलै तीन भवन इक जोती।
तास विचारत त्रिभुवन सूझै चुणिलै मांणिक मोती ॥ 5 ॥

अलख-निरंजन परब्रह्म परमात्मा ने निराकार और साकार, अमूर्त और मूर्त (अव्यक्त और व्यक्त) निर्विकल्प और सविकल्प समाधि के रूप में दो दीपकों की रचना की। इन दोनों स्थितियों में अलक्ष्य ब्रह्म की एक ही ज्योति विद्यमान है। उस परमज्योति के सहज ध्यान से तीनों लोकों का रहस्यज्ञान प्रकट हो जाता है। उसी ज्योति में, परमचिन्मय प्रकाश में हंसस्वरूप आत्मा ज्ञानरूप मोती चुगने लगता है।

वेदे न सास्त्रे कतेबे न कुरांणे पुस्तके न बंच्या जाई।
ते पद जांनां बिरला जोगी और दुनी सब धंधै लाई ॥ 6 ॥

वेद, शास्त्र, धर्मग्रंथ, कुरान तथा अन्यान्य आध्यात्मिक दर्शनों के वाङ्मय (साहित्य) में परब्रह्म परमात्मा के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है, योगानुभव के विज्ञानी योगी ही उसका ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस संसार में जन्म लेने वाले अन्य प्राणी तो पाँच भौतिक प्रपंच और अहंता-ममता के बंधन में जकड़ने वाली अविद्या-माया के वशीभूत होकर आत्मविस्मरण कर बैठते हैं।

राशियों का मासफल

दिनांक ०१ अप्रैल २०२६ से ३०अप्रैल २०२६ तक

बारह राशियों का फलादेश

*डॉ0 दिग्विजय शुक्ल

मेषः इस माह परिश्रम का अच्छा फल मिलेगा। कार्यक्षेत्र में नई जिम्मेदारियाँ मिल सकती हैं। आर्थिक स्थिति सामान्य से बेहतर रहेगी। क्रोध और उतावलेपन से बचें। परिवार का सहयोग मिलेगा। सन्तान को सुखद समाचार मिलेगा। व्यापार में सफलता लाभदायक सिद्ध होगी।

वृषभः इस मास में धन और प्रतिष्ठा में वृद्धि के योग हैं। व्यापार या नौकरी में लाभ मिल सकता है। पुराने मित्रों से मिलन होगा। स्वास्थ्य का ध्यान रखें, विशेषकर खान-पान में संयम रखें। आर्थिक स्थिति मजबूत होगी। स्वजनों के प्रति लगाव बढ़ेगा। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी।

मिथुनः इस माह कुछ मानसिक तनाव बन सकता है, परन्तु बुद्धिमत्ता से समस्याओं का समाधान मिलेगा। यात्रा के योग बन सकते हैं। विद्यार्थी वर्ग के लिए समय अनुकूल रहेगा। प्रतिस्पर्धी कार्यो में सफलता मिलेगी। आर्थिक विपन्नता दूर होगी। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी।

कर्कः यह माह मिश्रित फल देने वाला रहेगा। परिवार में सुख-शान्ति बनी रहेगी। धन खर्च बढ़ सकता है। कार्यक्षेत्र में धैर्य रखना आवश्यक है। देशाटन करने का सुअवसर बनेगा। आकस्मिक लाभ मिलेगा। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी। परिजनों से बचाव करें तो सफल होगें।

सिंहः यह माह प्रगति का संकेत देता है। नौकरी और व्यवसाय में नए अवसर मिल सकते हैं। समाज में मान-सम्मान बढ़ेगा। अहंकार से बचना आवश्यक है। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी। सन्तान के मार्ग प्रशस्त होगें। आपके कर्म क्षेत्र में अचानक प्रगति होगी। व्यापार के मार्ग में आगे बढ़ सकते हैं।

कन्याः इस माह में परिश्रम अधिक रहेगा परन्तु उसका फल भी प्राप्त होगा। आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। स्वास्थ्य के प्रति थोड़ी सावधानी रखें। परिवार का सहयोग मिलेगा। रिस्की कार्यो में सफलता मिलेगी। मांगलिक कार्य करने का अवसर बनेगा । व्यापार में सतर्क रहने की आवश्यकता है।

तुलाः यह माह शुभ संकेत लेकर आएगा। धन लाभ और नए कार्य आरम्भ करने के योग

*ज्योतिषविभागाध्यक्ष, श्री गोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ गोरखपुर।

बनेगें। दाम्पत्य जीवन में मधुरता बनी रहेगी। आर्थिक विपन्नता दूर होगी। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी। पुत्र की समुन्नति का योग बनेगा। दूरस्थ यात्रा करने के लिए बाध्य होगें।

वृश्चिकः इस माह संयम रखने की आवश्यकता है। कार्यों में विलम्ब हो सकता है। धैर्य और मेहनत से सफलता मिलेगी। स्वास्थ्य का ध्यान रखें। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी। विलम्बित कार्यो में सफलता मिलेगी। व्यवसाय में सफलता मिलेगी। आर्थिक स्थिति मजबूत होगी।

धनुः यह माह उत्साह और ऊर्जा से भरा रहेगा। नए कार्यों में सफलता मिल सकती है। यात्रा के योग बन सकते हैं। परिवार में प्रसन्नता का वातावरण रहेगा। स्वजनों का सहयोग मिलेगा। आर्थिक बाधा दूर होगी। सन्तान प्राप्ति का योग बनेगा। कोई विशेष कार्य करने के लिए तत्पर होगें। स्वजनों का सहयोग मिलेगा।

मकरः यह माह आमजन के लिए सामान्य रहेगा। नौकरी में स्थिरता रहेगी। आर्थिक मामलों में सावधानी रखें। घर-परिवार में जिम्मेदारियाँ बढ़ सकती हैं। स्वास्थ्य के लिए सतर्क रहने की आवश्यकता है। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी। सन्तान की समुन्नति का योग बनेगा। व्यापार में सफलता मिलेगी।

कुंभः यह माह लाभकारी सिद्ध हो सकता है। नए लोगों से सम्पर्क बनेगा जो भविष्य में सहायक होंगे। स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। आर्थिक बाधा दूर होगी। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी। मान- सम्मान के प्रति सजग रहने की आवश्यकता है। व्यापार में सफलता मिलेगी। मांगलिक कार्य करने के लिए तत्पर होगें।

मीनः यह माह शुभ संकेत देता है। धन लाभ के योग हैं। आध्यात्मिक रुचि बढ़ सकती है। परिवार में सुख-शान्ति बनी रहेगी। किसी निकटस्थ का वियोग सम्भव है। व्यापार में चढ़ाव उतार बना रहेगा। पारिवारिक जीवन में सफलता मिलेगी। पुत्र की सफलता से हर्षित होगें।

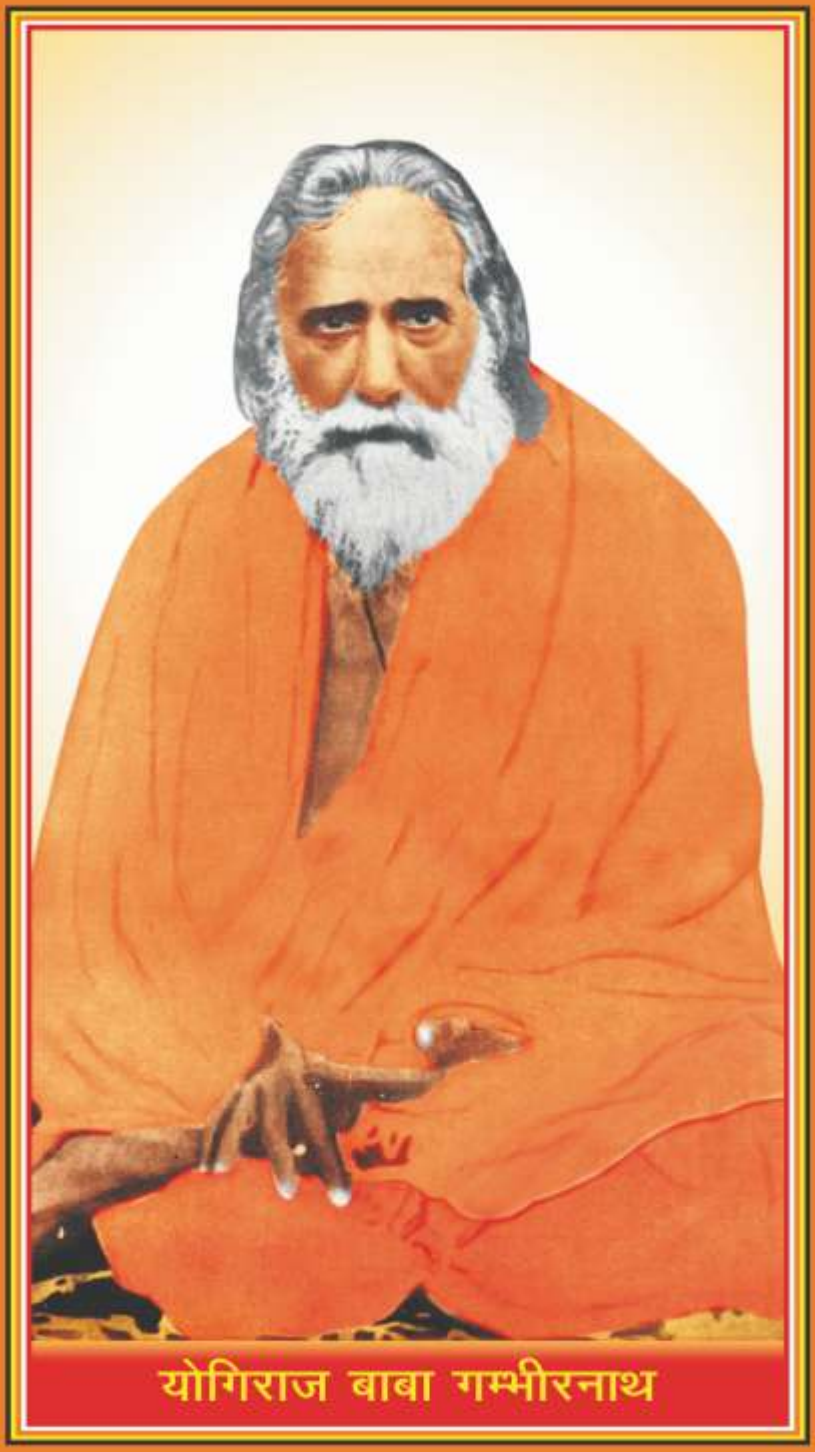

योगिराज बाबा गम्भीरनाथ

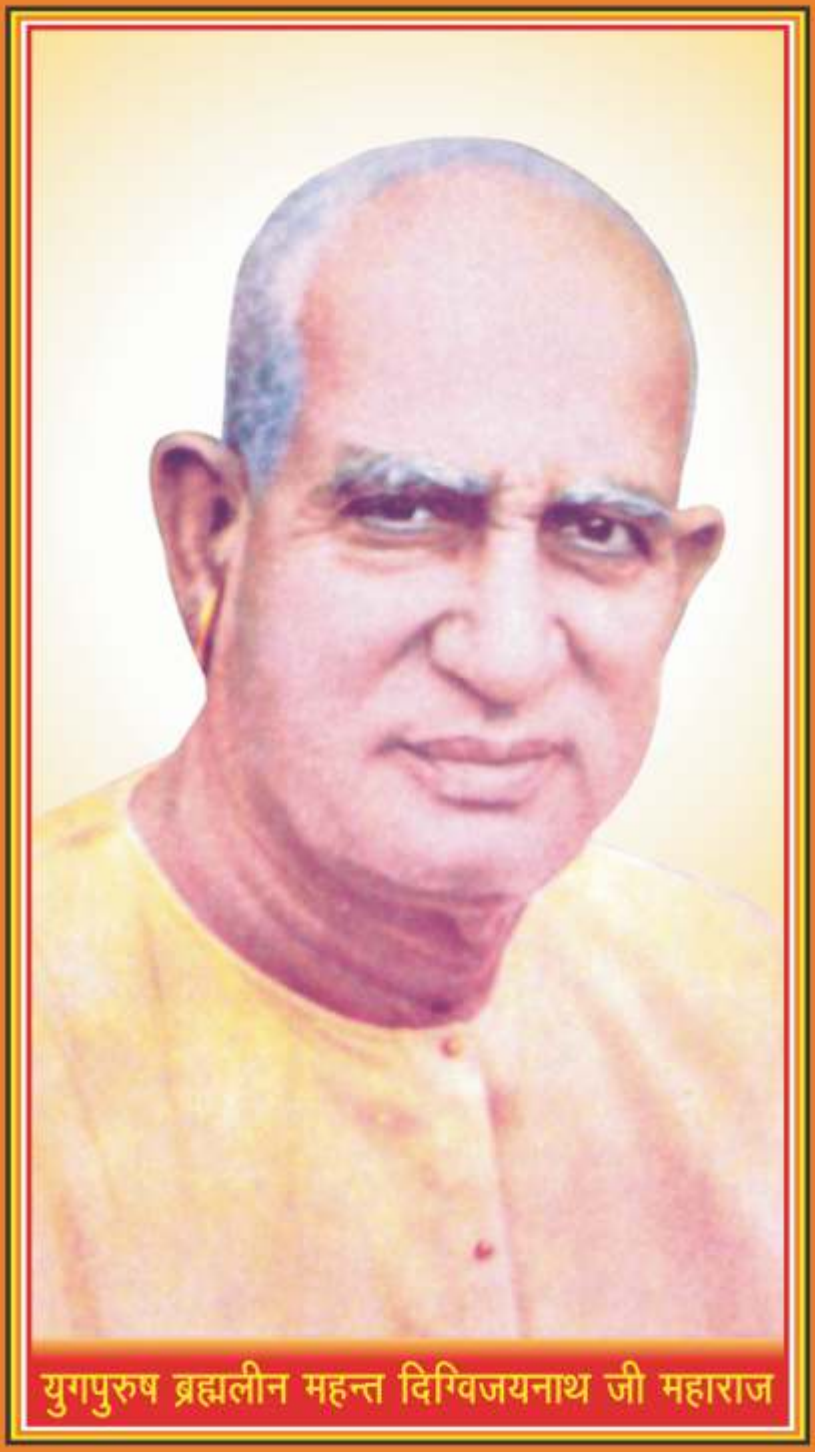

युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज

कायशोधन और यौगिक षट्कर्म

*योगी आदित्यनाथ

प्रकृति और स्वास्थ्य का अति सन्निकट का सम्बन्ध है। उत्तम स्वास्थ्य प्रकृति की गोद में ही प्राप्त हो सकता है। मूल प्रकृति त्रिगुणात्मक होने से प्राणि मात्र के शरीर भी वात, पित्त, कफ इन त्रिधातुओं के नाना प्रकार के रूपान्तरों के सम्मिश्रण है। आयुर्वेद में स्वास्थ्य की परिभाषा वात, पित्त, कफ से की गई है।

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः ।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते ॥

कुछ शरीर वात प्रधान, कुछ पित्त प्रधान कुछ कफ प्रधान होते हैं। वात प्रधान शरीरों में आहार-विहार के दोष से तथा देशकालादि हेतु से प्रायः वातवृद्धि हो जाती है, पित्त प्रधान शरीरों में पित्त विकृति और कफ प्रधान शरीरों में प्रायः कफ प्रकोप हो जाता है, जिससे दूषित श्लेष्मा, आमवृद्धि या मेद का संग्रह हो जाता है जबकि शरीर में वात, पित्त कफ क्रम सं ४:२:१ के अनुपात में हो तभी सम अवस्था मानी जाती है। इस अनुपात में जब भी असन्तुलन होता है तब शरीर में विकार उत्पन्न हो जाता है। इन विकारों को रोकने के लिये तथा देह को पूर्ववत स्वस्थ बनाने के लिये जैसे आयुर्वेद में स्नेहन, स्वेदन के अतिरिक्त वमन, विरेचन, वस्ति, नस्य, अनुवासन ये पंच कर्म बताये गये हैं, वैसे ही हठयोग के प्रवर्तक ऋषि-महर्षियों ने शरीर की शुद्धि के लिये सात साधन बताये हैं जो इस प्रकार हैं-अर्थात् वात, पित्त और कफ सन्तुलित हो, शरीरगत अग्नि सम हो, सप्त धातु और मल-निष्कासन आदि क्रिया सम अवस्था में हो तथा पांच ज्ञानेन्द्रियां, मन व आत्मा प्रसन्न हो तब ही मनुष्य स्वस्थ है, ऐसा माना जाता है।

शोधनं दृढ़ता चैव स्थैर्यं धैर्यं च लाघवम्।
प्रत्यक्षं निर्लिप्तं च घटस्थं सप्तसाधनम॥

अर्थात शोधन, दृढ़ता, स्थैर्य, लाघव, प्रत्यक्ष और निर्लिप्त ये सात साधन शरीर शुद्धि के लिये बताये गये हैं।

षट्कर्मणा शोधनं च आसनेन भवेद् दढम्।
मुद्रया स्थिरता चैव प्रत्याहारेण धीरता॥
प्राणायामाल्लाघवं च ध्यानात्प्रत्यक्षमात्मनि ।
समाधिना च निर्लिप्तं युक्तिरेव न संशयः ॥

---

*गोरक्षपीठाधीश्वर एवं मुख्यमन्त्री उत्तर प्रदेश

अर्थात् शोधन के लिए षट्कर्म, दृढ़ता के लिये आसनों का अभ्यास, स्थैर्य के लिये मुद्रायें, धैर्य के लिये प्रत्याहार, लाघव के लिये प्राणायाम, ध्येय के प्रत्यक्ष दर्शनार्थ ध्यान और निर्लिप्तता (आसक्ति-हीनता) के लिये समाधि, इस क्रम से अभ्यास करने पर अवश्व ही योग सिद्धि होती है, इसमें संशय नहीं है।

शरीर के मलों व विषाक्त तत्त्वों को दूर करने की क्रिया को शरीर-शोधन कहते हैं। शरीर शोधन अथवा शुद्धिकरण हठयोग में छः प्रकार से किया जाता है, जिन्हें षट्कर्म कहते हैं। गोरक्ष संहिता के अनुसार-

धौर्तिर्वस्तिस्तथा नेतिनौलिकिस्त्राटकस्तथा ।
कपालभातिश्चैतानि षट्कर्माणि समाचरेत्।

अर्थात् योग के लिए धौति, वस्ति, नेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति इन षट्कर्मों का अभ्यास करना चाहिए।

षट्कर्म की इन क्रियाओं द्वारा विभिन्न प्रकार के कफ, वात और पित्तगत दोषों को कुष्ठ, प्लीहा, फेफड़े तथा उदर आदि के आभ्यान्तरिक विकारों को दूर कर शरीर को पुर्ण रूप से नीरोग रखा जा सकता है। इस कायशोधन से शरीर स्वस्थ रहता है और उसमें सभी नाड़ियाँ मलरहित होती हैं। इस प्रकार पट्कर्मों की उपयोगिता केवल शरीर शोधन में नहीं अपितु शोधित शरीर से किये गये योगाभ्यास से कुण्डलिनी जागरण तथा षट्चक्रभेदन पूर्वक शिवशक्ति के समरसीकरण की अभीष्ट सिद्धि में भी है। अतः इनका क्रमशः विस्तृत निरूपण आवश्यक है।

ॐ नमो भगवते गोरक्षनाथाय !

नवनाथ कथा

ज्योतिः स्वरूप ऊँकार आदिनाथो महेश्वरः।
धात्रीस्वरुपा शर्वाणी या ख्यातोदयनाथतः।।
अपां स्वरूपो ब्रह्माऽसौ सत्नाथः सुविश्रुतः।
विष्णुस्तेजः स्वरुपः सन्तोषनाथ इतीरितः ।।
वायुरूपः शेषनागोऽचलनाथ उदाहृतः।
नमो रूपो गणेशश्च गजकन्थडिरुच्यते।।
वनस्पतिस्वरूपोऽसौ चतुरङ्गी च चन्द्रमा ।
मायास्वरूपो मत्स्येन्द्रः करुणामय ईरितः ।।
अलक्ष्यरूपस्त्रयक्षश्च गोरक्षोऽयोनिशङ्करः ।
नवनाथस्वरूपाणि समाम्नातानि योगिभिः।।
नवनाथान् नमस्कृत्य नवशक्तिसमन्वितान् ।
नवधाभक्तिलाभाय नवनाथकथा कृता।।

भावार्थ-

- ज्योति स्वरूप ऊँकार महेश्वर आदिनाथ हैं।
- पृथ्वी स्वरुपा पार्वती विख्यात उदयनाथ हैं।
- जलस्वरूप ब्रह्मा सत्यनाथ हैं।
- तेजस्वरूप विष्णु सन्तोषनाथ हैं।
- वायुस्वरूप शेषनाग अचलनाथ हैं।
- आकाशस्वरूप गणेश गजकन्थडिनाथ हैं।
- वनस्पतिस्वरूप चन्द्रमा चौरङ्गी नाथ हैं।
- मायास्वरूप करुणामय मत्स्येन्द्रनाथ है ।
- अलक्ष्यस्वरूप अयोनिशङ्कर त्रिनेत्र गोरक्षनाथ है।

इस प्रकार नवनाथों के स्वरूप सिद्ध योगियों ने कहे हैं। नवशक्ति युक्त नवनाथों को नमस्कार कर नवधा भक्ति लाभ के लिये नवनाथ कथा की गई है।

■

गोरक्षनाथ के योग का स्वरूप

*डॉ० उमा सिंह

गोरक्षनाथ की हठयोग प्रदीपिका में योग साधना के व्यावहारिक पक्षों का विवेचन किया गया है, इसमें व्यक्त अनुभव और साधना पद्धति के द्वारा योग की साधना करने वाले राजयोग की सिद्धि सहज प्राप्त होती है। जो व्यक्ति परमात्मा के प्रति आस्थावान होकर परमात्मा की प्राप्ति के लिए अविद्या आदि क्लेशों को नष्ट करने वाले उत्तम गुणों को प्रकट करते हुए योगाभ्यास करते हैं, परमात्मा उन योगियों को ऋतम्भरा (सारे ज्ञान) प्रज्ञा प्रदान कर मोक्ष के आनन्द के अनुरूप वृहज्योति-परमज्योति में स्वस्थ अथवा स्थित होने के योग्य बना देते हैं। ऐसे योगी तत्वज्ञानी होकर परमात्मज्ञान से युक्त हो जाते हैं। हठयोग प्रदीपिका ग्रन्थरत्न को कई योगी सम्प्रदाय संत - महात्माओं और सिद्ध पुरुषों तथा जनसाधारण ने योग साधना के मार्ग निर्देशक के रूप में स्वीकार किया है और उसके व्यावहारिक सिद्धान्त के अनुरूप योगाभ्यास कर योगसिद्धि और जीवनमुक्ति प्राप्त की है। हठयोग प्रदीपिका यद्यपि हठयोगशास्त्र है तथापि इस शास्त्र का प्रतिपाद्य राजयोग है, अथवा राजयोग और हठयोग दोनों का सहज समन्वय है। हठयोग प्रदीपिका में मनोन्मनी (मन को नियन्त्रित करने की कला) और समाधि की चरम अवस्था में योगी ने जिस राजयोग की ज्योति प्रकाशित की है, उससे यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि राजयोग की सिद्धि को ही दृष्टि में रखकर 'हठयोग प्रदीपिका' ग्रन्थ का प्रणयन किया गया है। निर्मल और वशवर्ती मन से सम्पन्न योगी ही इस समन्वयात्मक प्रयास का आनन्द प्राप्त करने में समर्थ होता है। हठयोग प्राणसाधना की विधा है । हठयोग प्रदीपिका के रचियता ने इस प्राणविधा के उपदेश के लिए ही इस रचना में योग के सिद्धान्त और व्यावहारिक पक्ष का समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाया । इस समन्वय की आधारशिला राजयोग की महती सिद्धि है। यह संयम ही हठयोग है, 'ह' प्राण का वाचक है 'ठ' अपान का वाचक है प्राण और अपान को नाभिस्थान में आकर्षण कर उनका अधोमुखीकरण ही प्राण और मन का संयम है। प्राण और मन के संयमित होने पर चित्त वृत्ति निरोधरूप योग ही योगी की समाधि अवस्था में राजयोग की सिद्धि करता है। स्पष्ट होता है कि मन और

*यह लेख डॉ. उमा सिंह की पुस्तक 'गोरखनाथ एवं पतंजलि के योगदर्शन के तात्विक स्वरूप का तुलनात्मक अध्ययन' का अंश है।

प्राण के संयम से ही स्वरूपावस्थान की उपलब्धि हो जाती है। हठयोग से शरीर समस्त व्याधियों से छुटकारा पाता है, मन निर्मल होता है, हृदय की गति संतुलित होती है, चित्त की चंचलता का क्षय होता है और इस तरह साधक स्वस्थ होकर अपनी योगसाधना में तत्पर रहता है। साधना करते-करते योगी इतना समर्थ हो जाता है कि वह जीवन्मुक्ति का आस्वादन करते हुए मृत्यु को टाल देता है। यह योग की भाषा में कालवञ्च कहा जाता है पर मृत्यु को टालना मृत्यु को रोकना नहीं है। योगी प्राकृतिक विधान का उल्लंघन कर मृत्यु को रोकने का प्रयास नहीं करता, वह इसे जीवन की असंगति मानता है, मृत्यु को टालना एक दूसरी अस्थायी प्रक्रिया है। हठयोग प्रदीपिका में शंकर द्वारा पार्वती को दिये गये उपदेश के माध्यम से योग के ज्ञान की परम्परा की अक्षुण्णता योगीन्द्र मत्स्येन्द्रनाथ और शिवगोरक्ष महायोगी गोरखनाथ तक आयी है। यह पद्धति स्वसंवेद्य होते हुए भी श्रुति- स्मृति आगम तथा तन्त्रादि में वर्णित योग विद्या के अनुरूप है। साधक के लिये यही उपादेय है कि वह राजयोग के लिए हठयोग की क्रमशः साधना करे, जिससे शरीर और मन के निर्दोष होने पर वह अपने गन्तव्य को उपलब्ध कर सके। अपरोक्षानुभूति के संदर्भ में शंकर का कहना है कि हठयोग उनके लिये है, जिन्हें अपने शरीर और मन को मलदोषों से मुक्त और निर्मल करने की आवश्यकता है। मनोदशा के लिये दो कर्म योग और ज्ञान है, योग से वृत्ति निरोध और ज्ञान से ठीक-ठीक स्वरूप दर्शन होता है। किसी के लिये योग असाध्य है तो किशी के लिये ज्ञान असाध्य है। योग और ज्ञान को हठयोग एवं राजयोग कहा गया है। योग का तात्पर्य जीवात्मा और परमात्मा की एकता है। हठयोग के सम्बन्ध में अनेक पूर्ववर्ती ग्रन्थ शिव संहिता, गोरक्षसंहिता, विवेक मार्तण्ड योगबीज, सिद्ध-सिद्धान्त पद्धति, महर्षि घेरण्डकृत संहिता तथा अनेक हठयोग प्रदीपिका के अनुवर्ती और परम्परागत ग्रन्थ है। ऐसा कहा जाता है कि शंकर ने पार्वती को हठयोग (सूर्य - प्राणवायु और चन्द्र अपानवायु के योग) की विधा की शिक्षा देकर योग के ज्ञान को प्रकाशित किया है। यह (हठयोग विधा) राजयोग की सिद्धि की सीढ़ी है। ब्रह्मानंद ने इसकी टीका करते हुए सर्ववृत्ति निरोध लक्षण वाले असंप्रज्ञात योग को राजयोग कहा है। केवल राजयोग के लिए ही हठविधा का उपदेश किया गया है। राजयोगफल सहित हठयोग ही हठयोगप्रदीपिका ग्रन्थ का प्रतिपाद्य है।

योग जीवन का विज्ञान है, यह अमृत विधा है। हठ योग तन को स्वस्थ, मन को स्थिर और आत्मा का परम पद में प्रतिष्ठित करने अथवा अमृतत्व को प्राप्त करने का अमोघ साधन तथा महाज्ञान है। हठयोग मानवीय जीवन को सहज और नैसर्गिक वातावरण के अनुकूल संयोजित करने का शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रयोग है। योग से बढ़कर अन्य कोई मोक्षप्रद मार्ग नहीं है। योगबीज में गोरक्षनाथ का कहना है कि योग से बढ़कर अन्य कोई मोक्षप्रद मार्ग नहीं हैं योगबीज में गोरक्षनाथ का कहना है कि योग से बढ़कर न कोई पुण्य है, न कोई सुख और न सूक्ष्म ज्ञान ही है। हठयोग में आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के साथ-साथ कुण्डलिनी जागरण, मुद्राबन्धादि, अभ्यास, षटचक्रभेदन् नादानुसंधान तथा अमृतपानादि पर विशेष बल दिया गया है। इसी के आधार पर योग के स्वरूप को समझा जा सकता है। हठयोग प्रदीपिका, शिव संहिता घेरण्ड संहिता, गोरक्ष संहिता तथा अनेकानेक योगोपनिषदादि हठयोग विद्या के प्रामाणिक शास्त्र हैं। हठयोग विद्या की वास्तविक जानकारी तो श्री मत्स्येन्द्रनाथ और गोरक्षनाथ तथा अन्यान्य श्रेष्ठनाथ सिद्धों की ही देन है। गोरक्षनाथ के हठयोग विज्ञान के आधार पर ही हठयोग शास्त्र के रूप में हठयोग प्रदीपिका का प्रणयन संभव हो सका है। श्रुति और स्मृतियों में योगमार्ग से श्रेष्ठ अन्य साधन मार्ग का निरूपण उपलब्ध ही नहीं होता। हठविद्या को, शिवसंहिता में शिवविद्या तथा महाविद्या कहा गया है। शिव ने पार्वती से कहा था कि यह शास्त्र गोपनीय है विद्वान् इसे गुप्त ही रखते हैं। सिद्धि प्राप्त करने के इच्छुक साधकों को हठविद्या गुप्त रखनी चाहिए ऐसा न करने पर वह निष्फल और निर्वीर्य हो जाती है। हठयोग के सन्दर्भ में राजयोग को समाधि, उन्मनी अवस्था अमृततत्व (की सिद्धि) लय, अनमस्कता, निरंजनबोध, जीवन्मुक्ति, सहजावस्था और तुरीयपद आदि कहा गया है तथापि योग की मूलतः एक धारा है, वह अष्टांग यम, नियम आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान और समाधि से संयुक्त है, पर इनमें से प्रथम दो अंग यम-नियम को साधना के सहज अंग के रूप में स्वीकार कर केवल बाद के छः अंगों को ही महत्व देकर षडङ्गयोग के रूप में स्वीकार किया गया है। हठयोग की सर्वोपरि विशिष्टता है प्राण के ब्रह्मरन्ध्र में लयपूर्वक कुण्डलिनी जागरण तथा षटचक्रभेदन पूर्वक नादानुसंधान के द्वारा मन का उन्मनीकरण । हठयोग के षडंगयोग साधना के

स्तर पर प्राण और मन के संयमन को महत्व दिया गया है, इन दोनों के वश में हो जाने पर योग सिद्धि का मार्ग सुगम हो जाता है। महर्षि पतंजलि द्वारा निर्दिष्ट चित्तिवृत्तिनिरोध रूप योग मन और प्राण के संयम के ही अधीन है। यही हठयोग का राजयोग समन्वयात्मक फलस्वारस्य है । योगवाशिष्ठ में महर्षि वशिष्ठ ने राम को समझाते हुए कहा है कि हे राम् शरीर रूपी रथ की गति के लिये ईश्वर ने मन और प्राण का सृजन किया है, बिना इनके शरीर क्रियाशील हो ही नहीं सकता । प्राण के बाहर निकल जाने पर शरीर का कार्य समाप्त हो जाता है जब मन कार्यरत होता है। इनका सम्बन्ध वही है जो सारथी और रथ का होता है, ये एक दूसरे को गति प्रदान करते हैं, इसलिये बुद्धिमान् को प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए, यदि वे योगसिद्धि के लिये मन को स्थिर करना चाहते हैं। तो प्राणायाम से सभी प्रकार के भौतिक सुख और आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति होती है। राज्य प्राप्ति से लेकर मोक्ष तक की सिद्धि, परमानन्द की प्राप्ति होती है। इसलिये प्राणायाम के विज्ञान का अध्ययन करना चाहिए । प्राण की उपस्थिति, कार्यशीलता व गतिमत्ता से सूक्ष्म कारण और स्थूल शरीर में निरन्तर गतिशीलता बनी रहती है। हठयोग साधना की समस्त प्रक्रिया की आधारशिला मन और प्राण का परमपद में लय है। संसार में दैहिक, दैविक, भौतिक तीनों तापों से आकुल प्राणियों का (साधन के रूप में) एकमात्र आश्रय हठयोग है।

हनुमान : विरुद्धों का महासामंजस्य और विराट चेतना का विस्तार

*प्रो रजनीश कुमार शुक्ल

भारतीय वाङ्मय में हनुमान एक ऐसे अनूठे महाप्राण देवता हैं, जो किसी एक परिभाषा की संकीर्ण परिधि में नहीं सिमटते। वे एक ओर अतुलितबलधाम हैं, तो दूसरी ओर ज्ञानिनामग्रगण्य। वे पशु-जाति के प्रतिनिधि हैं, किंतु वेदों के प्रकांड विद्वान भी हैं। वे दास्य भाव की पराकाष्ठा हैं, तो साथ ही अष्ट सिद्धियों और नौ निधियों के अजेय स्वामी भी। हनुमान का चरित्र विरुद्धों का श्रेष्ठतम सामंजस्य है। उपर्युक्त श्लोक उनके इसी विरोधाभासी सौंदर्य का बीज मंत्र है। हनुमान का व्यक्तित्व उस महासागर की भाँति है जिसकी लहरों में चंचलता है, पर गहराइयों में अगाध शांति।

अज्ञान का कौतुक और प्रज्ञा का आलोक: बालक हनुमान

हनुमान के चरित्र का प्रथम सोपान उनका बाल्यकाल है। द्विवेदी जी अक्सर कहते थे कि मनुष्य के भीतर की आदिम जिजीविषा ही उसे देवत्व की ओर ले जाती है। बालक हनुमान का वह कौतुक, जिसमें वे उदय होते सूर्य को एक रसीला बिम्ब फल समझकर निगलने के लिए आकाश की ओर झपटते हैं, वास्तव में जड़ प्रकृति पर चेतन आत्मा की पहली संप्रभुता का उद्घोष था।

वाल्मीकि रामायण में इस दृश्य का चित्रण किसी रोमांचक गाथा से कम नहीं है- विवत्सुः खमिवोत्पलम्। वह बालक सूर्य की उष्णता से भयभीत नहीं था, क्योंकि उसके भीतर 'वायु' का वेग था। यह सूर्य को निगलने की चेष्टा नहीं थी, बल्कि क्षुद्र से विराट होने की तड़प थी। ऋषियों द्वारा उन्हें उनकी शक्तियों को भूल जाने का जो शाप मिला, वह वास्तव में एक वरदान था-ताकि उनकी शक्ति केवल प्रभु-कार्य के समय ही प्रकट हो, और शेष समय वे विनम्रता के आवरण में सुरक्षित रहें। 'हनुमन्नाटक' में इस घटना को एक अद्भुत मोड़ दिया गया है, जहाँ राहु भी बालक हनुमान के तेज से भयभीत हो जाता है।

---

*लेखक पूर्व कुलपति एवं तुलनात्मक धर्म दर्शन के आचार्य है।

प्रज्ञा और कूटनीति का संगमः सुग्रीव-मंत्री हनुमान

जब हनुमान युवावस्था में प्रवेश करते हैं, तो वे केवल एक बलशाली वानर नहीं रह जाते, बल्कि बुद्धिमतां वरिष्ठम् की पदवी को सार्थक करते हैं। सुग्रीव के मंत्री के रूप में उनका चरित्र एक कुशल कूटनीतिज्ञ का है। ऋष्यमूक पर्वत पर जब वे प्रभु राम से मिलते हैं, तो वे एक ब्राह्मण का रूप धरकर जाते हैं। वाल्मीकि रामायण में राम लक्ष्मण से उनके भाषाई कौशल की प्रशंसा करते हुए कहते हैं-

नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम।

बहु व्याहरताऽनेन न किंचिदपशब्दितम।।

जिसने संपूर्ण व्याकरण न पढ़ा हो, वह इतनी परिष्कृत भाषा नहीं बोल सकता। रामचरितमानस में उनकी इस चतुराई का वर्णन है कि उन्होंने बिना शस्त्र उठाए, केवल अपनी वाक्-शक्ति से दो महान शक्तियों राम और सुग्रीव का गठबंधन कराया। राजनीति में इसे रणनीतिक संतुलन कहा जाता है। हनुमान का विवेक यह है कि वे जानते हैं कब शस्त्र उठाना है और कब केवल शब्दों से ही शत्रु को जीत लेना है।

वात्सल्य की कोमल सरिताः सीता-पुत्र हनुमान

हनुमानजी का सबसे मर्मस्पर्शी रूप माता सीता के साथ उनके संबंधों में दिखाई देता है। यद्यपि वे महावीर हैं, लेकिन अशोक वाटिका में वे एक पुत्र के रूप में अवतरित होते हैं। हनुमान ने लंका की अशोक वाटिका में राम की मुद्रिका ही नहीं दी, बल्कि एक विरही माँ को उसका खोया हुआ वात्सल्य लौटा दिया। तुलसीदास जी ने मानस में लिखा है-

आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना।

होहु तात बल सील निधाना।।''

माँ ने उन्हें केवल बल का नहीं, बल्कि शील का खजाना होने का आशीर्वाद दिया। यहाँ हनुमान का विरुद्ध रूप यह है कि वे एक ओर तो रावण के लिए काल हैं, और दूसरी ओर सीता के चरणों की धूल। हनुमन्नाटक में एक मार्मिक संवाद है, जहाँ हनुमान कहते हैं कि हे माता! मैं अभी आपको अपनी पीठ पर बैठाकर राम के पास ले जा सकता हूँ, किंतु मैं मर्यादा और प्रभु की आज्ञा से बंधा हूँ। यह 'जितेन्द्रिय' होने की पराकाष्ठा है।

लंका-दहनः दंभ की स्वर्ण-भस्म और विवेक की ज्वाला

लंका-दहन हनुमान के चरित्र का वह रुद्र पक्ष है, जो अन्याय की सीमा समाप्त होने पर प्रकट होता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह स्वर्णमयी जड़ता पर चेतन तेज की विजय है। रावण की लंका अधिकार और अहंकार की प्रतीक थी।

तुलसीदास जी उनके रौद्र रूप को काल के समान बताते हैं: अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास। हनुमान ने लंका जलाई, पर विभीषण का घर छोड़ दिया। यह क्रोध और विवेक का वह दुर्लभ संतुलन है जो केवल हनुमान में संभव है। 'हनुमन्नाटक' के अनुसार, हनुमानजी ने रावण के ऐश्वर्य की उस कालिमा को उजागर किया जो सोने की पर्त के नीचे छिपी थी। उन्होंने सिद्ध किया कि आग यदि राम-प्रताप की हो, तो वह केवल पाप को जलाती है, पुण्य को नहीं।

नादब्रह्म में 'अद्वैत' का विलापः संगीत विशारद हनुमान

अक्सर हनुमान की गदा की चर्चा होती है, पर उनकी वीणा का नाद कम ही सुना जाता है। अद्‌भुत रामायण' के अनुसार, हनुमान संगीत के ऐसे आचार्य थे कि उनके स्वर पाषाणों को भी द्रवित कर देते थे। नारद मुनि का संगीत-अहंकार हनुमान की एक रागिनी से विदीर्ण हो गया। कला वही है जो अहंकार को गला दे।

संगीत में सात स्वर होते हैं और हनुमानजी उन सातों सुरों के स्वामी हैं। हनुमान की वीणा से निकलने वाली ध्वनि कोई सुर-ताल की विलासिता नहीं थी, वह तो भक्त के हृदय की वह पुकार थी जो शून्य को भी सगुण बना देती है। योद्धा का हाथ यदि गदा उठा सकता है, तो वही हाथ वीणा की कोमल तारों पर भी उतनी ही कुशलता से थिरक सकता है। संगीत के क्षेत्र में हनुमत्-मत का प्रवर्तक होना उनके बुद्धिमतां वरिष्ठम् होने का प्रमाण है।

पंचमुखी विग्रहः ब्रह्मांडीय चेतना का महासंगम

हनुमानजी का 'पंचमुखी' रूप उनके विरुद्ध रूपों के सामंजस्य की पराकाष्ठा है। यह भारतीय दर्शन के भूत और प्राण के पंचात्मक सत्य का मूर्तिमान स्वरूप है: वानरमुख पूर्व भक्ति और सहजता का अधिष्ठान। नरसिंह मुख दक्षिण, रौद्र और रक्षण का सामंजस्य। सच्ची करुणा वही है जो दुष्टों के लिए वज्र बन जाए। गरुड़ मुख पश्चिम वेग और ऊर्ध्वगमन की पराकाष्ठा। जड़ता के धरातल से उठकर चेतना के आकाश में उड़ने का सामर्थ्य।

वराह मुख उत्तर समृद्धि और धरा के रक्षण का मुख। यह सिद्ध करता है कि हनुमान के लिए ऐश्वर्य भोग की वस्तु नहीं, सेवा का साधन है। हयग्रीव मुख ऊर्ध्व प्रज्ञा और शब्द-ब्रह्म का शिखर। यह मुख समस्त विद्याओं का स्रोत है।

यह पंचमुखी विग्रह हमें सिखाता है कि जीवन केवल एक पक्षीय नहीं होता। हमें अवसर पड़ने पर वानर जैसा विनम्र, नरसिंह जैसा कठोर और हयग्रीव जैसा विद्वान होना पड़ता है।

राम-भक्ति की पराकाष्ठा: हृदय-विदारण और शरणागति

हनुमानजी के जितने भी रूप हैं, वे अंततः राम-भक्ति में ही विलीन होते हैं। हनुमन्नाटक का वह प्रसंग, जहाँ हनुमान अपना वक्ष स्थल चीर कर दिखाते हैं, किसी चमत्कार का प्रदर्शन नहीं था। वह इस सत्य का प्रमाण था कि राम ही देह है, राम ही प्राण है।

तुलसीदास जी ने हनुमान की भक्ति को अनन्य कहा है। वाल्मीकि रामायण' के उत्तरकांड में जब वे स्वर्ग जाने के बजाय इसी पृथ्वी पर रहकर राम-कथा सुनने का वरदान मांगते हैं, तो वह भक्ति की वह पराकाष्ठा है जहाँ मोक्ष भी सेवा के सामने तुच्छ हो जाता है। वे चिरंजीवी हैं, क्योंकि उनकी भक्ति अविनाशी है।

समग्र सौंदर्य का संकलन हैं हनुमान

हनुमान का व्यक्तित्व विरोधाभासों का एक सुंदर हार है। वे हमें सिखाते हैं कि बलवान होने के लिए कठोर होना आवश्यक नहीं, विनम्र होना अनिवार्य है; और विद्वान होने के लिए केवल शास्त्र पढ़ना पर्याप्त नहीं, सेवा का भाव होना जरूरी है। वे 'मनोजवं' होकर भी स्थिर हैं, 'मारुततुल्यवेगं' होकर भी मर्यादा में हैं।

हनुमान भारतीय संस्कृति के वह ललित विग्रह हैं, जो हमें सिखाते हैं कि हम अपने भीतर के विरुद्धों को कैसे एक लय में बांधें।

देवी के कामराज नामक बीजक मन्त्र क्ली की गाथा

*आचार्य नवनीत

१-कथा अयोध्या नगरी राजा ध्रुवसन्धि की - बहुत समय पहले अयोध्या नरेश पुष्य के पुत्र ध्रुवसन्धि के नाम से विख्यात थे वे धर्मात्मा, सत्यनिष्ठ तथा वर्णाश्रम-धर्मकी रक्षाके लिये सदा तत्पर रहते थे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, द्विजगण तथा अन्य सभी अपनी-अपनी जीविका में तत्पर रहकर धर्मपूर्वक आचरण करते थे। उनके राज्य में कहीं भी चोर, निन्दक, धूर्त, पाखण्डी, कृतघ्न तथा मूर्ख मनुष्य निवास नहीं करते थे । उनकी दो पत्नियाँ थी। मनोरमा जिससे उन्हें बड़ा पुत्र सुदर्शन और लीलावती से शत्रुजित् नामक पुत्र हुए। शत्रुजित् नामक पुत्र अत्यन्त सुन्दर तथा मृदुभाषी था, इस कारण से सभी मंत्री और राजा छोटे पुत्र को ज्यादा अनुराग करते थे । एक समय राजा वन में गए। वन में आखेट करते समय सिंह के साथ लड़ाई के समय उनकी मृत्यु हो गई। तत्पश्चात् दोनों पुत्रों के छोटे होने के कारण मंत्री और गुरु वसिष्ठ ने बड़े पुत्र सुदर्शन को राजा बनाने का विचार किया । परंतु लीलावती के पिता युधाजित् और मनोरमा के पिता वीरसेन अयोध्या आए और राजगद्दी पर कौन बैठेगा इस पर विवाद हो गया। दोनों में युद्ध हुआ और राजा वीरसेन युद्ध हार गए और उनकी मृत्यु हो गई । यह सब देख मनोरमा डर गई और मेरे पुत्र को ना मार डाले इस वजह से और मेरी सौत लीलावती भी मुझसे वैरभाव रखती है इसलिए उसने अपने एक मंत्री विदल्ल को बुलाया तो उसने कहा मेरे मामा सुबाहु वाराणसी के वन में रहते हैं। हम वहाँ चलेंगे , तब अपने पिता को देखने के लिए मनोरमा लीलावती से कह अपने पुत्र , दासी , मंत्री विदल्ल को लेकर अपने पिता का दाह संस्कार करते हुए दो दिनों में गंगा किनारे पहुँच गई । वहाँ निषादों ने उसका रथ और सारा धन छीन लिया उसके बाद वहाँ से वो सब भारद्वाज मुनि के आश्रम पहुँच गए ।

२-क्ली मन्त्र का आरम्भ - भारद्वाज आश्रम पहुँचने के पश्चात् उन्होंने मनोरमा से कहा एक दिन तुम्हारा पुत्र बड़ा राजा बनेगा। इधर राजकुमार शत्रुजित का अभिषेक किया गया, परंतु युधाजित् सुदर्शन को भी मारने के लिए उसका पता कर आश्रम पहुँच गए और मुनि से कहने लगे आप उनको हमे दे दीजिए। भारद्वाज मुनि ने मनोरमा से जाने के लिए पता किया तो उन्होंने मना कर दिया, तब राजा को मुनि मना

*योगाचार्य, श्री गोरखनाथ मन्दिर गोरखपुर।

करते हुए बोले वो नहीं जाएगी आप चले जाइए राजा बोले आप नहीं मानोगे तो हम उसे बलपूर्वक लेकर जाएँगे । ऋषि बोले- जैसे प्राचीन काल में विश्वामित्र वसिष्ठमुनिकी गौ ले जानेके लिये उद्यत हुए थे, उसी प्रकार यदि आप में शक्ति हो तो आज मेरे आश्रमसे इसे बलपूर्वक ले जाइये, इससे राजा डर गए और उन्हें वही छोड़ चले गए । एक दिन सुदर्शन के पास आये हुए विदल्लको किसी मुनिकुमार ने 'क्लीब' इस नामसे पुकारा, उसे सुन एकाक्षर 'क्ली' शब्द को स्पष्ट रूप से धारण कर लिया और उस अनुस्वारविहीन अक्षर का ही वह बार-बार उच्चारण करने लगा बालक ने इस कामराज नामक बीजमन्त्र को मन से ग्रहण कर लिया और उसे हृदयंगम करके आदर पूर्वक जपना प्रारम्भ कर दिया और दिन रात सोते जागते हुए वो उसे जपने लगा। दैवयोग से ही उस बालक सुदर्शन को यह कामराज नामक अद्‌भुत बीजमन्त्र स्वयमेव प्राप्त हो गया । एक बार देवी ने उसे अपने रूप का प्रत्यक्ष दर्शन भी दिया और सुदर्शन जगदंबा की उपासना करने लगा ।

३-शशिकला और सुदर्शन का विवाह - काशीराज की पुत्री शशिकला ने सुदर्शन के बारे में सुना और उसे अपने पतिरूप में वरण कर लिया आधी रात को जगदम्बा स्वप्नमें शशिकला के पास आकर स्थित हो गयीं और उसे आश्वस्त करके यह वचन बोलीं- 'हे सुश्रोणि ! सुदर्शन मेरा भक्त है, तुम उसी को अपना पति स्वीकार कर लो। वो तुम्हारी सभी इच्छा पूरी करेगा' फिर उसने अपनी सखी को ये वार्ता बतायी । उधर काशीराज ने शशिकला के लिए स्वयंवर रखवा दिया, जब दासी ने रानी को सारी बातें बतायी कि शशिकला तो सुदर्शन को ही अपना वर मानती है, तब राजा और रानी ने उसे समझाया कि वो तो वन में रहता है। ना उसके पास खाने के लिए है ना रहने के लिए, परंतु उसने एक ना मानी। ये बात सभी वहाँ आए राजाओं को भी पता चल गई जिसमें युधाजित् और शत्रुजित् भी आए थे। उधर मना करने के बाद भी सुदर्शन अपनी माता मनोरमा और दासी के साथ वहाँ पहुँच गए , कुछ राजा जो सुदर्शन को भगवती का दास मानते थे उन्होंने उसे चले जाने को भी कहा परंतु भगवती माँ की आज्ञा मान सुदर्शन नहीं गए और बोले नीचे तो माँ भगवती जगजननी ने आदेश दिया है

तया यद्विहितं तच्च भवितात्र न संशयः ॥
न शत्रुरस्ति संसारे कोऽप्यत्र जगतीश्वराः ।
सर्वत्र पश्यतो मेऽद्य भवानीं जगदम्बिकाम् ॥

उन्होंने जो विधान रच दिया होगा, वह होकर ही रहेगा; इसमें कोई संशय नहीं है।।
हे राजागण ! इस संसारमें मेरा कोई शत्रु नहीं है। मैं सर्वत्र भवानी जगदम्बा को विराजमान देख रहा हूँ ।।
जो मुझसे शत्रुता करेगा माता उसे स्वयं दण्डित करेंगी ।

यद्भावि तद्वै भविता नान्यथा नृपसत्तमाः ।
का चिन्ता ह्यत्र कर्तव्या दैवाधीनोऽस्मि सर्वदा ॥

हे श्रेष्ठ राजाओं ! जो होना है, वह अवश्य ही होगा; उसके विपरीत कुछ भी नहीं हो सकता। अतः इस विषय में क्या चिन्ता की जाय? मैं तो सदा प्रारब्ध पर भरोसा करता हूँ ।
अगले दिन स्वयंवर के समय शशिकला ने स्वयंवर सभा में जाने से मना कर दिया तो राजा सुबाहु ने सोचा, सब राजा युद्ध का आरम्भ ना कर दे इस डर से सभी राजाओं के पास गए और सारी बात बतायी कि मेरे और रानी के कहने से भी वो यहाँ नहीं आ रही है, मैं तो आप सबका दास हूँ और बोले आज आप सभी अपने कक्ष में विश्राम करिए, कल सुबह मैं अपनी पुत्री को समझाकर यहाँ ले आऊंगा, तब सभी राजा तो, कुछ नहीं बोले परंतु क्रोध के साथ युधाजित् बोला कि आपको ये स्वयंवर नहीं करना था, परंतु हम सब यहाँ आए हैं तो ठीक है कल आप उसे लेकर आइए। इन सब राजाओं को छोड़ आप अपनी कन्या उस निर्धन, बलहीन सुदर्शन को दे रहे हो। तुम मेरे मित्र हो इसलिए कल तक मेरे नाती के साथ इसका विवाह करा दो, वरना सबको मारकर मैं इसका विवाह शत्रुजित् के साथ करा दूँगा , इसके बाद भी शशिकला नहीं मानी तो अपने गुप्तचर के साथ राजा सुबाहु ने शशिकला और सुदर्शन का विवाह गुप्त तरीके से कर दिया और मनोरमा और सुदर्शन से बोले, आप मेरा ये राज्य ले लीजिए, मैं आपका सेनापति बनकर रहूँगा या आधा राज्य ले लीजिए, अब आप किसी ग्राम या वन में रहें ये मुझे ठीक नहीं लगेगा, मनोरमा बोली आप अपना राज्य करिए, मेरा पुत्र भी अपना राज्य एक दिन साकेतपुरी अयोध्या में करेगा ।

४-युधाजित् तथा अन्य राजाओं से सुदर्शन का घोर संग्राम, भगवती सिंहवाहिनी दुर्गा का प्राकट्य - इसके बाद सुबाहु अगले दिन मित्र राजाओं के पास निमंत्रण देने गए, ये देख बाकी सब क्रोध में युद्ध की धमकी देने लगे और सुदर्शन का रास्ता रोक लिया, तब सुदर्शन एकाक्षर कामराज नामक सर्वोत्तम मन्त्र का जप कर रहे थे,सुबाहु अपनी सेना लेकर आ गए परंतु सुदर्शन ने मना कर दिया तब

युधाजित्, शत्रुजित् अन्य राजाओं के साथ सुदर्शन का वध करने के लिए आ गए, तभी लोमहर्षक संग्राम छिड़ जाने पर सहसा भगवती प्रकट हो गयीं। वे सिंह पर सवार थीं, विविध प्रकार के शस्त्रास्त्र धारण किये थीं, अत्यन्त मनोहर थीं तथा उत्तम आभूषणों से अलंकृत थीं, दिव्य वस्त्र पहनी थीं और मन्दार की माला से सुशोभित थीं।। उन्हें देख सभी चकित हो गए, तभी भयंकर युद्ध छिड़ गया और चण्डिका ने क्रुद्ध हो विविध रूप धारण कर कुछ ही क्षणों में शत्रुजित् और राजा युधाजित्- दोनों को अन्य राजाओ के साथ मार डाला, तब सुबाहु ने भगवती की तरह-२ से स्तुति की

नमो देव्यै जगद्धात्र्यै शिवायै सततं नमः ।
दुर्गायै भगवत्यै ते कामदायै नमो नमः ॥

५- देवी का सुबाहु और सुदर्शन को वर देना - तब देवी ने उनसे वरदान मांगने के लिए कहा सुबाहु बोले मैं तो आपके दर्शन पाकर कृतकृत्य हो गया, हे माता! परंतु आप सदा काशी में निवास करे इस पर देवी बोली जब तक ये धरती रहेगी तब तक मैं मुक्तिपुरी काशी में निवास करूँगी ।
उसके बाद देवी ने सुदर्शन को कहा कि तुम अयोध्या जाओ और राज्य करो, सदा मेरा स्मरण रखना, मैं सर्वदा तुम्हारा और तुम्हारे राज्य का कल्याण करूँगी ।

६-सुदर्शन को देवी पूजा विधि बताना - अष्टमी, चतुर्दशी और विशेष करके नवमी तिथि को विधि-विधान से मेरी पूजा अवश्य करते रहना। हे अनघ ! तुम अपने नगर में मेरी प्रतिमा स्थापित करना और प्रयत्न के साथ भक्तिपूर्वक तीनों समय मेरा पूजन करते रहना ।।
शरत्काल में सर्वदा नवरात्र विधान के अनुसार भक्तिभाव से युक्त होकर मेरी महापूजा करनी चाहिये। हे महाराज! चैत्र, आश्विन, आषाढ़ तथा माघमास में नवरात्रके अवसर पर मेरा महोत्सव मनाना चाहिये और विशेष रूप से मेरी महापूजा करनी चाहिये।। विज्ञजनों को चाहिये कि वे भक्तियुक्त होकर कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तथा अष्टमीको सदा मेरी पूजा करें । इसके बाद देवी अंतर्धान हो गई और सुदर्शन अयोध्या चले गए ।

७-सुदर्शन का अयोध्या जाना और देवी का बीजमन्त्र बताना - अयोध्या पहुँचने के बाद सुदर्शन ने अपनी दूसरी माता से कहा देवी मैंने उनका वध नहीं किया, मुझसे बैर भाव के कारण देवी ने उनका वध किया है आप भी मेरे लिए मेरी माँ की तरह ही

है क्योंकि मैं तो सबमें देवी का ही वास देखता हूँ-

अहं वनगतो मातर्नाभवं दुःखमानसः ।
चिन्तयन्स्वकृतं कर्म भोक्तव्यमिति वेद्मि च ॥

हे माता ! अपने किये हुए कर्म का फल भोगना ही पड़ता है- यह सोचते हुए मैं वन में गया था, इसलिये मेरे मन में दुःख नहीं हुआ। इस बात को मैं अभी भी जानता हूँ।। जैसे कठपुतली नट आदि के संकेत पर नाचती है, उसी प्रकार जीव को भी अपने कर्म के अधीन होकर सर्वत्र रहना पड़ता है ।। ९ ।। इसलिए देव विधान मन किसी भी समय न ज्यादा प्रसन्न रहे न दुःखी रखें, ये सब तो आता जाता रहता है ।
उसके बाद ज्योतिषियों को बुलाकर शुभ दिन और मुहूर्त पूछा और कहा कि सोने का सुन्दर सिंहासन बनवाकर उस पर विराजमान देवी का मैं नित्य पूजन करूँगा। जैसे मेरे पूर्वज श्रीराम आदि ने किया था। उसके बाद विधि विधान से उनका पूजन हुआ और राज्य करने लगे। जिस तरह से राम हुए और जिस प्रकार दिलीप के पुत्र राजा रघु हुए उसी प्रकार सुदर्शन भी हुए। जैसे उनके राज्य में प्रजाओं को सुख था और मर्यादा थी, वैसा ही राजा सुदर्शन के राज्य में भी था कोसल देश , काशी राज से इस धरातल के सभी जगह भगवती दुर्गा विख्यात हो गईं और सभी जगह उनकी पूजा होने लगी सभी लोग भगवती शक्ति को मानने लगे, उनकी भक्ति में निरत रहने लगे और वेद- वर्णित स्तोत्रों के द्वारा उनके जप तथा ध्यान में तत्पर हो गये। इस प्रकार भक्ति परायण लोग सभी नवरात्रीं में विधानपूर्वक भगवती का पूजन, हवन तथा यज्ञ करने लगे और बीजक मन्त्र का जाप करने लगे जिससे सभी खुशहाल रहने लगे ।। जो सुदर्शन को बचपन में ही सिद्ध हो गया था -

न जानामि दानं न च ध्यानयोगं
न जानामि तन्त्रं न च स्तोत्रमन्त्रम् ।
न जानामि पूजां न च न्यासयोगं।
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ॥ ३ ॥

हे भवानि ! मैं न तो दान देना जानता हूँ और न ध्यान मार्ग का ही मुझे पता है, तन्त्र और स्तोत्र-मन्त्रों का भी मुझे ज्ञान नहीं है, पूजा तथा न्यास आदि की क्रियाओं से तो

मैं एकदम कोरा हूँ, अब एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो ।।३।।

न जानामि पुण्यं न जानामि तीर्थं
न जानामि मुक्तिं लयं वा कदाचित् ।
न जानामि भक्तिं व्रतं वापि
मातर्गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि ।।४।।

न मैं पुण्य जानता हूँ न तीर्थ, न मुक्ति का पता है न लय का। हे मातः ! भक्ति और व्रत भी मुझे ज्ञात नहीं है, हे भवानि ! अब केवल तुम्हीं मेरी गति हो, तुम्हीं मेरी गति हो ।

■

युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी की हिंदुत्व अवधारणा

***डॉ.राकेश कुमार तिवारी**

एकान्त साधना में नैष्ठिक योगी, राष्ट्र के उन्नायक, देश प्रसिद्ध लोक संग्रही, विख्यात हिंदू नेतृत्वकर्ता तथा नाथ परंपरा के साथ-साथ हिंदुत्व अर्थात् भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठ परम्पराओं का संयोजन एवं संवर्धन करने वाले युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी की हिंदुत्व अवधारणा अप्रतिम है। उनका मत है कि भारत वही भूमि है जहां से दर्शन तथा आत्मज्ञान की ऊंची लहरों ने बारंबार उठकर समस्त विश्व को ओतप्रोत करने के साथ ही पतनोन्मुख मानवता को नवजीवन एवं शक्ति प्रदान किया। भारत की भूमि केवल आर्य हिंदुओं की ही नहीं अपितु संपूर्ण मानवता की मातृभूमि, पितृभूमि एवं पुण्यभूमि के साथ धर्म और दर्शन की आदि भूमि भी है, जिसके क्षितिज पर विश्वास तथा संस्कृति का सर्वप्रथम सूर्योदय हुआ था। हिंदुत्व एक आदर्श राष्ट्रीय शब्द है जिसमें समस्त भारतीय समाज को एक सूत्र में आबद्ध कर लिया है। बौद्ध धर्म के नाम पर केवल बौद्ध धर्म अनुयायी आगे बढ़ेंगे, सनातन धर्म के नाम पर केवल सनातनी आगे आएंगे पर हिंदुत्व के नाम पर सब एक साथ सम्मिलित रूप से आएंगे, उनमें सनातनी, आर्य समाज, सिख, जैन तथा बौद्ध सभी रहेंगे। हिंदू राष्ट्र के स्वरूप की अवधारणा पर उनका मत था कि हिंदू राष्ट्र में किसी पर अत्याचार नहीं होगा तथा प्रत्येक देशवासी के साथ न्याय होगा, प्रत्येक नागरिक को धर्म की पूर्ण स्वतंत्रता होगी परंतु राष्ट्र के प्रत्येक निवासी को यहां की संस्कृति सभ्यता परंपरा इतिहास साहित्य तथा राष्ट्र वीरों को सम्मान एवं सम्यक दृष्टि के साथ ही विदेशी होने की मनोवृत्ति एवं विश्वासघात की भावना को त्यागना पड़ेगा। उनका प्रश्न था कि क्या मैं पूछ सकता हूं कि यदि भारत हिंदू राज्य नहीं था तो पाकिस्तान के हिंदू वहां के मुसलमानों द्वारा मारे जाने पर भारत में ही शरण के लिए क्यों आए? वे अफगानिस्तान, तिब्बत, ईरान तथा अरब आदि देश में क्यों नहीं चले गए? उत्तर

*प्रभारी प्रकाशन विभाग, श्री गोरखनाथ मंदिर गोरखपुर

स्पष्ट है कि भारत में इसलिए आए कि वह जानते थे कि केवल भारत ही ऐसा देश है जहां हम शरण पा सकते हैं। यही हिंदुओं की पितृभूमि एवं पुण्यभूमि है। उनका इस देश से परंपरागत संबंध रहा है तथा उनका पूर्ण विश्वास था कि जब तक इस भूमि पर हिंदू बसे हुए हैं उन्हें कोई यहां से हटा नहीं सकेगा। हिंदू किसी धार्मिक पंथ का नाम नहीं अपितु देश की राष्ट्रीयता का नाम है तथा इससे भी अधिक इसने हमारे संपूर्ण इतिहास में राष्ट्रीय प्रभाव को एकरूप करके इसे गतिशील बनाया है। इस प्रकार देश के विभिन्न तत्त्वों का हिन्दूकरण राष्ट्रीय एकता की प्रथम आवश्यकता होगी। हिंदुत्व ऐक्य कि वह अखंड शृंखला है जिसमें भारत की कई जातियां एवं संप्रदाय आबद्ध हैं जो मोती की माला की तरह टूट कर छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। सिख, जैन, बौद्ध आदि तथा अन्य संप्रदायों से भी हिंदुत्व की भावना क्षीण होती जा रही है, निश्चित ही उनमें सहिष्णुता तथा अलगाव बढ़े हैं। इनका समुचित हल हिंदू राष्ट्रवाद के प्रचार में संनिहित है। हिंदुत्व की थाती राष्ट्रीय एकता की सर्वाधिक सुगठित शक्ति रही है जिसने विभिन्न जातियों, विरोधी जलवायु, अनेक भाषा तथा धार्मिक विश्वास की विभिन्नताओं के बीच इस देश को एक राष्ट्र बनाया है। भाषा जाति प्रदेश तथा अन्य विघटनकारी प्रवृत्तियों की बढ़ती हुई दुश्चिन्ताओं का एकमात्र निदान हिंदुत्व ही है। जो लोग हिंदुत्व को सांप्रदायिक तथा राष्ट्र विरोधी कहकर उसकी निंदा करते हैं वे राष्ट्र के प्रति विश्वासघात करते हैं। हिंदू मुस्लिम एकता के मिथ्या नारे के परिणाम स्वरुप भारत का विभीषिका रूप में विभाजन हुआ, तत्पश्चात अलग-अलग नाम के आधार पर देश के विघटन का भय उत्पन्न होता रहा । हमें उन अवसरों को ढूंढना होगा जब हम सभी तत्त्वों को एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में बांधने के लिए हिंदू राष्ट्रीयता के तत्त्वों का उपयोग कर सकें। हिंदुत्व सांप्रदायिकता नहीं राष्ट्रीयता है, ऐसी राष्ट्रीयता जिसका भारत के अतिरिक्त अन्यत्र कोई अस्तित्व ही नहीं। स्मरण रहे कि कितने संप्रदाय नष्ट हो चुके हैं, नष्ट हो रहे हैं, एवं नष्ट होंगे परंतु हिंदू इन सब के ऊपर और अमर है। वह न कभी नष्ट हुआ है न होने वाला है और न ही हो रहा है। यदि किसी दिन भारत की हिंदुत्व रूपी राष्ट्रीयता के समाप्त

होने की अवधारणा का चिंतन की जा सकती है तो इसी के साथ यह भी सोच लेना चाहिए कि उस दिन भारत ही समाप्त हो जाएगा। यह तो अवश्य है कि हम अपनी सरकार को शक्तिशाली बनाना अपना राष्ट्रीय कर्तव्य समझें परंतु यह भी आवश्यक समझें कि हम स्वाभिमान से संसार में जीवित भी रहें, इसके लिए एक ही मार्ग हो सकता है कि हम हिंदुत्व की विचारधारा को अपनायें तथा इसी को अपने मनसा-वाचा-कर्मणा रूपी तन-मन-धन से शक्तिशाली बनाएं।

रामायण और महाभारत में वर्णित सूर्योपासना

*डॉ. धर्मेन्द्र मौर्य

रामायण-महाभारत काल में प्रायः सूर्य देवता का आवाहन वैदिक मन्त्रों से किया जाता था। वाल्मीकीय रामायण के युद्धकाण्ड के अन्तर्गत 'आदित्यहृदयस्तोत्र' नामक सूर्य-स्तोत्र का वर्णन हैं। अगस्त्य ऋषि ने इस स्तोत्र को परमपवित्र और सर्वशत्रु विनाशक कहा है। सूर्याभिमुख होकर इस स्तोत्र का तीन बार पाठ करने से श्रीराम युद्ध में विजयी हुए थे। स्तोत्र में सूर्य देवता के सामान्य रूप से अनेक नाम, रूप और गुण वर्णित हैं। राम, सीता और लक्ष्मण उदित सूर्य की वन्दना करते थे। श्रवण कुमार के माता-पिता प्रातः काल और सायंकाल सूर्योपासना करते थे। रामायण में मंदाकिनी नदी के तट पर स्थित अनेक सूर्योपासक, संन्यासियों का उल्लेख है। रामायण में सूर्य को सभी देवों का उत्पत्ति स्थान बताया गया है।

रामायण के अनुसार 'संध्या' वन्दन करने का विधान था। संध्या-वन्दन की व्याख्या करते हुए स्पष्ट किया गया है कि गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ जल लेकर-सूर्यदेव को अर्घ्य देना ही संध्या-वन्दन है। यह प्रक्रिया प्रातः काल सूर्योदय से पूर्व ही प्राची मुख होकर सम्पन्न की जाती थी तथा सायंकाल सूर्यास्त से पूर्व पश्चिम मुख होकर। भगवान राम विश्वामित्र के आश्रम में नियमपूर्वक संध्या-वन्दन करते हैं। इतना ही नहीं, वे वनवास काल में भी संध्या-वन्दन को कभी विस्मृत नहीं करते। यहाँ तक की सीता के वियोग में दुःखी होते हुए भी लंका में समुद्र के तट पर शान्त भाव से संध्या-वंदन करते हैं। रामायण में स्त्रियों द्वारा भी संध्या वंदन करने के प्रसंग उपलब्ध होते हैं- निषादराज गुह भरत से बताते हैं कि रामलक्ष्मण तथा सीता ने चित्रकूट की राह में शृंगवरेपुर में संध्या किया था।

रामायण से सूर्योपासना की विधि के विषय में भी महत्त्वपूर्ण सूचनायें मिलती है, यथा इस युग में सूर्य-पूजकों का एक ऐसा विशिष्ट वर्ग था, जो सूर्य की पूजा 'ऊर्ध्व बाहू' करके करते थे। उपनिषद् में उल्लिखित है कि सूर्यपूजा सूर्य की ओर मुख करके तथा भुजायें ऊपर उठा कर की जाती थी।

महाभारत में सौर सम्प्रदाय की गणना प्रमुख धार्मिक सम्प्रदायों में हुई है। महाभारत में संकेत मिलता है कि सूर्य के पुजारी वैदिक मन्त्रोच्चारण में दक्ष होते थे। महाभारत में

*सहायक आचार्य (प्राचीन इतिहास), शान्ति सशक्तिकरण स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिधुआपार बड़हलगंज गोरखपुर

उल्लिखित सूर्य के १०८ नामों में से अधिकांश नाम वैदिक हैं। महाकाव्यों में स्थान-स्थान पर सूर्य का मानव रूप में उल्लेख हुआ है।

महाकाव्यों में सूर्य के व्यक्तित्व में भी पर्याप्त विकास हुआ और उनके वैदिक स्वरूप मंडल, पक्षी, अश्व, वृषभ आदि के स्थान पर वे मानव रूपधारी देवता के रूप में प्रतिष्ठित हुए। रामायण के अनुसार जब अगस्त्य मुनि ने राम को आदित्य हृदययंत्र का जाप करने का आदेश दिया, उस समय सूर्य मानव रूप में राम के सम्मुख उपस्थित थे। अर्थात् सूर्योपासना में संध्या-वन्दन के साथ ही मानव-रूप में सूर्य की मूर्ति-पूजा का भी संकेत मिलता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि मानवीकरण के फलस्वरूप सौर परिवार में विस्तार हुआ, क्योंकि महाभारत में सूर्य के सहायकों का उल्लेख प्राप्त होता है। राजा पाण्डु के शिविर में एक हजार आठ सूर्य पूजक रहते थे । युधिष्ठिर सूर्य के अनन्य भक्त थे। वनवास अवधि में उनके द्वारा सूर्योपासना कर सूर्य से अक्षयपात्र प्राप्ति की कथा विश्रुत है, जिससे पाण्डव मन इच्छित भोजन प्राप्त कर सकते थे। विराट पर्व में दुष्ट कीचक से त्रस्त द्रौपदी जब सूर्य की स्तुति करती है, तो सूर्य उसकी रक्षा के लिए एक राक्षस को नियुक्त कर देते हैं। महाभारत में सिद्ध, गन्धर्व, यक्ष, गुह्यक, नाग, असुर एवं राक्षस आदि को सूर्यभक्त कहा गया है।

महाभारत में सूर्य देव के मानव सन्तानों का भी वर्णन है। आदि पर्व तथा वन पर्व में सूर्य के तेज से कुन्ती के गर्भ द्वारा वीर कर्ण के जन्म का उल्लेख है। स्पष्ट है कि महाकाव्य काल में सौर सम्प्रदाय का विस्तृत सामाजिक परिवेश था, किन्तु महाकाव्यों में सूर्य की मूर्ति-पूजा का साक्ष्य उपलब्ध नहीं होता है।

अहिल्याबाई होल्कर

*डॉ. अर्चना शुक्ला
प्रवक्ता (संस्कृत)

जन्म – ३१ मई १७२५, चौंडी (महाराष्ट्र)
माता – सुसिला बाई
पिता – माणकोजी शिंदे
धर्म – हिन्दू धर्म
जीवनसाथी – खंडेराव होल्कर
राज्यकाल – ११ दिसम्बर १७६७
उत्तराधिकारी – मालेराव होल्कर
राज्य प्रमुख – पेशवा (१७६६–१७६७)
शासन – १७६७– १३ अगस्त १७९५
मृत्यु – १३ अगस्त १७९५
स्थान – इंदौर (मध्य प्रदेश), भारत

प्रारंभिक जीवन एवं विवाह :

अहिल्याबाई का जन्म महाराष्ट्र के मराठी हिन्दु परिवार में मनकोजी शिंदे और सुशीला शिन्दे के घर हुआ था। उनके पिता गड़ेरिया परिवार के वंशज थे। अहिल्याबाई के पाँच भाई थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई थी।

अहिल्याबाई उस समय प्रसिद्धि में आई जब मराठा पेशवा बाजीराव प्रथम की सेना में कमांडर और मालवा के शासक मल्हार राव होल्कर पुणे जाते समय चांडी में रुके और एक मन्दिर की सेवा में उन्हें देखा । बालिका की धर्मपरायणता से प्रभावित होकर मल्हार ने अपने पुत्र खंडोजी को उस बालिका से विवाह करने की सलाह दी। १७३३ में विवाह के समय उनकी आयु मात्र ८ साल और वर की आयु १० साल थी। १७४५ में पुत्र मालोजी होल्कर एवं १७४५ में मुक्ताबाई होल्कर का जन्म हुआ। १७५४ से शुरु करके मल्हारराव ने अहिल्याबाई को कूटनीतिक बहसों, राज्य के वित्त मामलों और मुगल साम्राज्य और पेशवा दोनों की अन्य समस्याओं में भी सक्रिय रूप से शामिल रखा ।

*सरस्वती बालिका विद्यालय सूर्यकुण्ड गोरखपुर

विवाहित जीवन के दौरान उनका पालन-पोषण उनकी सास गौतम बाई होल्कर ने किया। जिन्हे अहिल्याबाई को उचित मूल्यों को सिखाने का श्रेय दिया जाता है। उन्होंने उन्हें प्रशासन, लेखा एवं राजनीति में प्रशिक्षित किया।

१७५४ में खांडेराव की मृत्यु के पश्चात् मल्हार राव ने उन्हें सैन्य मामलों में प्रशिक्षित करना शुरू किया। मल्हार की २० मई १७६६ को मृत्यु हो गई।

२३ अगस्त १७६६ को आहिल्याबाई के इकलौते बेटे माले राव होल्कर इन्दौर के शासक बने, ५ अप्रैल १७६७ को उनकी मृत्यु हो गयी।

मल्हाराव के दत्तक पुत्र सूबेदार एवं आहिल्याबाई वास्तविक शासक बन गई।

ऐतिहासिक अभिलेखों से ज्ञात होता है कि पड़ोसी राज्यों के समूहों, विशेष रूप से जयपुर के चूड़ावत वंश में इस एकता हस्तान्तरण के दौरान विद्रोह किया। आहिल्याबाई ने इस विद्रोहों के खिलाफ मराठा सेनाओं का नेतृत्व किया तथा संसाधनों एवं सहायता की कमी के बावजूद हर लड़ाई जीती।

शासन :- मध्य भारत में इन्दौर की अहिल्याबाई का शासन ३० वर्षों तक चला, यह एक ऐसे काल के रूप में प्रसिद्ध है। जिसके दौरान उत्तम व्यवस्था एवं लोगों को समृद्धि प्राप्त हुई। वह शासक एवं कुशल प्रबंधक थी। १८ वीं शताब्दी में मालवा की महारानी के रूप में धर्म का सन्देश एवं औद्योगीकरण के प्रचार-प्रसार में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इन्दौर को उन्होनें स्वच्छ एवं सुन्दर शहर बना दिया।

प्रगतिशील सुधार एवं बुनियादी ढाँचे का विकास उनके शासन काल की विशेषता थी। अहिल्याबाई के शासन में मालवा में शान्ति, समृद्धि एवं स्थिरता बनी रहीं। उनकी राजधानी महेश्वर साहित्यिक, संगीतात्मक, कलात्मक एवं औद्योगिक गतिविधियों में बेहतरीन स्थान में परिवर्तित हो गई। कवियों, कलाकारों, मूर्तिकारों, का उनके राज्य में स्वागत किया गया। उन्होने महेश्वर में वस्त्र उद्योग स्थापित किया जो वर्तमान में महेश्वरी साड़ियों के लिए प्रसिद्ध है।

योगदान :- धार्मिक स्मारकों का संरक्षण

वाराणसी में काशी विश्वनाथ मन्दिर, सोमनाथ मन्दिर सौराष्ट्र, हरिद्वार, केदारनाथ,

ऋषिकेश, प्रयाग, द्वारका, रामेश्वरम्, नासिक, उज्जैन नेपाल इत्यादि मन्दिरों एवं धार्मिक संरचनाओं का निर्माण या पुनर्निर्माण करवाया। जल संरक्षण के लिए तालाब, किसान की आय के लिए कपास एवं मसालों की खेती द्वारा उन्हें सशक्त करने का प्रयास किया। पर्दा-प्रथा का अन्त किया। अपने शासन काल में जीर्णोधार करवाया। अपने शासनकाल में ग्रीष्म ऋतु में कई स्थान पर प्याऊँ का प्रबन्ध करवाया। डाकुओं और भीलों को उन्होने समाज की मुख्यधारा में जोड़ा तथा समाज के उपेक्षित लोगों की सेवा ईश्वर की सेवा माना।

उनकी सफल कूटनीति का साक्ष्य यह है कि विशाल सैन्य बल से सुसज्जित राघोवा को अकेले पालकी में बैठकर आने के लिए विवश कर दिया। उनकी आज्ञाओं में 'श्री शंकर आज्ञा' लिखा रहता था, क्योंकि वो भगवान शंकर की परम भक्त थी। उनका मत था सत्ता मेरी नहीं है सम्पति भी मेरी नहीं है। जो कुछ है भगवान् का है उनके प्रतिनिधि स्वरुप भगवान् का है।

निष्कर्ष:-

महारानी, आहिल्याबाई एक दूरदर्शी, विनम्र उदार शासक के रुप में प्रसिद्ध हुई। उनके हृदय में जरूरतमन्दों गरीबों असहाय व्यक्तियों के लिए दया एवं परोपकार की भावना के कारण उनको 'लोकमाता' और दार्शनिक रानी के रुप में जाना जाता है। उनकी न्यायप्रियता और शासन ने उन्हें एक आदर्श शासक बना दिया। उनके द्वारा किये गये सार्वजनिक कार्य, एवं विरासत आज भी लोगों को प्रेरित करती है।

१३ अगस्त १७९५ को ७० वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया परन्तु उनका योगदान इतिहास में अहमता की गवाही देते हैं।

१८४९ में कवयित्री जोलाना वैली ने लिखा - ब्रह्मा के यहाँ से हमारी भूमि पर शासन करने आई एक श्रेष्ठ महिला, दयालु था जिसका हृदय, उज्ज्वल थी जिसकी कीर्ति, सम्मानित नाम था उनका आहिल्याबाई।

■

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज

अंत:करण शुद्धि का महापर्व है नवरात्र

*डॉ. अभिषेक उपाध्याय

सनातन धर्म, संस्कृति एवं परम्परा में प्रत्येक दिवस कोई न कोई पर्व त्यौहार एवं उत्सव को मनाने की व्यवस्था है। उसी क्रम में भारतीय नव संवत्सर आध्यात्मिकता से परिपूर्ण ऊर्जा के साथ आरम्भ होता है। संवत्सर का आरम्भ ही शक्ति की अहैतु-की कृपा से होती है। इस अवसर पर एक विशिष्ट मुहूर्त में विशेष अनुष्ठान के साथ हमारा नववर्ष आरम्भ होता है। यह इन्द्रिय संयम, आध्यात्मिक जागृति के साथ अंत:करण शुद्धि का महापर्व होता है जिसे नवरात्र कहते हैं। नवरात्र पर्व पर प्रकाश डालने से पूर्व हम इससे जुड़े हुए कुछ महत्तवपूर्ण विषयों की ओर अपना ध्यान आकर्षित करना चाहते है।

प्रकृति के साथ भारतीय संस्कृति भी बहुत उत्कृष्ट एवं प्राच्यविद्या के साथ जुड़ी एक अनुसंधान की सतत प्रवाह है। नवसंवत्सर का प्रवेश होने वाला है। नूतनता का चतुर्दिक् प्रसार दिखाई देता है। रस-राग और सुगंध से भरी हुई प्रकृति में तितलियां, भ्रमर और कोयलें अपने उन्मुक्त उल्लास के द्वारा मानो समृद्धि का संकेत कर रहे हैं। हमारा भारत इस अर्थ में विलक्षण है। यहां वर्ष का नवीकरण मात्र आंकिक गणनाओं के अधीन नहीं, अपितु संपूर्ण पर्यावरण की नवीनता को अंगीकार कर नवसंवत्सर के आगमन का उत्सव मनाता है। जिसमें ऋतुएं बसती हैं, उसे संवत्सर कहते हैं। संवत्सर की प्रथम ऋतु के रूप में वसंत का आगमन होता है। वसंत ऋतु के चैत्र और वैशाख नामक दो महीने हैं, जिन्हें क्रमश: मधुमास और माधवमास कहा जाता है-'वसंतौ मधुमाधवौ'। यह मधुऋतु है, मधु अर्थात् जीवन का सत्व। इसी से जीवन की गति है। इसी मधु की न्यूनता, इसका सूख जाना शिशिर ऋतु के रूप में दिखाई पड़ता है। पत्ते वृक्षों से गिर जाते हैं। वनस्पतियां अपने रस-राग से रहित प्रतीत होने लगती हैं। इन दोनों के बीच ग्रीष्म, वर्षा, शरद और हेमंत ऋतु का क्रम रहता है।

इसी वसंत से प्रारंभ होता है हमारा नव संवत्सर। यह कालपुरुष के अनवरत चक्रमण का ही प्रतिफल है। राजा जनक एवं ऋषि अष्टावक्र के संवाद के क्रम में अष्टावक्र ने कहा है- '२४ पर्व, छह नाभि, १२ अंश और ३६० दिन वाला संवत्सर रूप कालचक्र आपकी रक्षा करें। यह संवाद संवत्सर में निहित भारतीय ज्ञान परम्परा के कसौटी पर विज्ञान को प्रकट करता है। इस कालचक्र को समझने चलेंगे तो हमें अपने जीवन के गहरे संदेश अनुभव होंगे। नवसंवत्सर अपने आगमन से ही हमारा ध्यान मधु की ओर ले जाता है। सारा जीवन अंतर्निहित मधु का ही विलास है, तो

*मुख्य न्यासी श्री श्री १००८ मौनी बाबा चौरिटेबल ट्रस्ट
जम्मू कश्मीर

हमारे जीवन का मधु क्या है? जिसे हमें सुदीर्घ जीवन में भोगते और चुकाते जाते हैं। वेद कहते हैं- मधु भूयासं मधु सदृशः। हम मधु सदृश हो जाएं। यही मधु 'आनंद' कहलाता है। इसी से परमात्मा ने सृष्टि को रचा है। इस आनंदतत्त्व को स्वयं में पहचानने का अवसर है नवसंवत्सर। ग्रीष्म, वर्षा और शरद जीवन की ऋतु बनकर बीत जाते हैं। नवसंवत्सर का स्वागत करते हुए हम अपने आनंदतत्त्व को पहचानने का यत्न करें। अपना मधु खोजने में लगें। नवसंवत्सर अपनी नवीनता को प्रकृति के माध्यम से व्यक्त करता है। हम भी अपनी प्रकृति में जीने का अभ्यास करें। मधु का अनुसंधान करते हुए हम अपने भीतर सूख रहे रस-रुचि-राग को जगाने का संकल्प ले सकें तो संवत्सर की नवीनता हमारे जीवन में भी खिल सकेगी। अब हम नवरात्र के विषय में विस्तार से जानने का प्रयास करते हैं।

भारतीय संस्कृति में नवरात्र का अपना विशेष महत्त्व है। 'नवरात्र' शब्द से नव अहोरात्रों अर्थात् विशेष रात्रियों का बोध होता है। इस समय शक्ति के नवरूपों की उपासना की जाती है। 'रात्रि' शब्द सिद्धि का प्रतीक है। हमारे ऋषि-मुनियों ने रात्रि को दिन की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण बताया है इसलिए दीपावली, होलिका, शिवरात्रि और नवरात्र आदि उत्सवों को रात में ही मनाने की परम्परा है। यदि रात्रि का कोई विशेष रहस्य न होता तो ऐसे उत्सवों को 'रात्रि' न कहकर 'दिन' ही कहा जाता, लेकिन नवरात्र के दिन, 'नवदिन' नहीं कहे जाते।

संस्कृत व्याकरण के अनुसार 'नवरात्रि' कहना त्रुटिपूर्ण है। नव रात्रियों का समाहार, समूह होने के कारण यह द्विगु समास है और यह शब्द पुल्लिंग रूप 'नवरात्र' में ही शुद्ध है। नवरात्र क्या है? यदि इस विषय पर बात करे तो इसके बहुत से पर्याय मिलते है। पृथ्वी द्वारा सूर्य की परिक्रमा के काल में एक वर्ष की चार संधियां हैं। उनमें मार्च व सितंबर माह में पड़ने वाली गोल संधियों में वर्ष के दो मुख्य नवरात्र पड़ते हैं जिसे समाज का प्रत्येक वर्ग भक्ति भाव से करता है। इन दिनों में स्वाभाविक रूप से रोगाणु आक्रमण की सर्वाधिक आशंका होती है। ऋतु संधियों में अक्सर शारीरिक बीमारियां बढ़ती हैं अतः उस समय स्वस्थ रहने के लिए, शरीर को शुद्ध रखने के लिए, तन-मन को निर्मल और पूर्णतः स्वस्थ रखने के लिए की जाने वाली प्रक्रिया का नाम 'नवरात्र' है।

अमावस्या की रात से अष्टमी तक या प्रतिपदा से नवमी की दोपहर तक व्रत-नियम चलने से नौ रात अर्थात् 'नवरात्र' नाम सार्थक है। यहां रात गिनते हैं इसलिए नवरात्र अर्थात् नौ रातों का समूह कहा जाता है। यदि हम इसके रूपक की बात करें तो यह हमारे शरीर के नव मुख्य द्वारों के लिए भी प्रसिद्ध है। इसके भीतर निवास करने वाली जीवनी शक्ति का नाम ही दुर्गा देवी है। हमारे मुख्य इन्द्रियों के अनुशासन, स्वच्छता,

तारतम्य स्थापित करने के प्रतीक रूप में शरीर तंत्र को वर्षभर के लिए सुचारु रूप से क्रियाशील रखने के लिए नव द्वारों की शुद्धि का पर्व नव दिन तक मनाया जाता है। यह हमारे समझ की उपज हो सकती है।

शरीर को सुचारु रखने के लिए विरोचन, सफाई या शुद्धि प्रतिदिन तो हम करते ही हैं किंतु अंग-प्रत्यंगों की पूरी तरह से भीतरी सफाई करने के लिए हर छः माह के अनन्तर आन्तरिक सफाई की एक प्रक्रिया करनी चाहिए। सात्त्विक आहार के व्रत का पालन करने से शरीर की शुद्धि, साफ-सुथरे शरीर में शुद्ध बुद्धि, उत्तम विचारों से ही उत्तम कर्म, कर्मों से सच्चरित्रता और क्रमशः मन शुद्ध होता है। स्वच्छ मन-मंदिर में ही तो ईश्वर की शक्ति का स्थायी निवास होता है। ऐसे इन चारों नवरात्रों में शारदीय नवरात्र वैभव और भोग प्रदान देने वाले है। गुप्त नवरात्र तंत्रसिद्धि के लिए विशेष है जबकि चैत्र नवरात्र आत्मशुद्धि और मुक्ति के लिए। वैसे सभी नवरात्र का आध्यात्मिक दृष्टि से अपना महत्त्व है।
आध्यात्मकि दृष्टि से देखें तो यह प्रकृति और पुरुष के संयोग का भी समय होता है। प्रकृति मातृशक्ति होती है इसलिए इस समय देवी की पूजा होती है। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने कहा है कि सम्पूर्ण सृष्टि प्रकृतिमय है और वह पुरुष हैं। यानी हम जिसे पुरुष रूप में देखते हैं वह भी आध्यात्मकि दृष्टि से प्रकृति यानी स्त्री रूप है। स्त्री से यहां आशय यह है कि जो पाने की इच्छा रखने वाला है वह स्त्री है और जो इच्छा की पूर्ति करता है वह पुरुष है।

नवरात्र के नौ दिनों में मनुष्य अपनी भौतिक, आध्यात्मिक, यांत्रिक और तांत्रिक इच्छाओं को पूर्ण करने की कामना से व्रतोपवास रखता है और ईश्वरीय शक्ति इन इच्छाओं को पूर्ण करने में सहयोगी होती है। नवरात्र के नौ दिनों में देवी दुर्गा के नौ रूपों की पूजा की जाती है। प्रथम मां शैलपुत्री यह स्थिरता और धैर्य की प्रतीक हैं। द्वितीय स्वरूप मां ब्रह्मचारिणी जो संयम और तप की प्रतिमूर्ति हैं। तृतीय चंद्रघंटा माता शांति और निर्भीकता की स्वरूप हैं। चतुर्थ कूष्मांडा यह सृजनात्मक ऊर्जा की प्रतीक है। पंचम स्कंदमाता यह मातृत्व और संरक्षण की शक्ति स्वरूपा हैं। षष्ठ कात्यायनी शक्ति और साहस की प्रतीक है। सप्तम कालरात्रि यह अंधकार का नाश करती है। आठवीं माता महागौरी यह पवित्रता और शांति की द्योतक हैं और माता सिद्धिदात्री यह आत्मज्ञान और सिद्धि की अधिष्ठात्री है। यदि ज्योतिष की दृष्टि से विचार करें तो चैत्र नवरात्र का विशेष महत्त्व है, क्योंकि इस नवरात्र के समय ही सूर्य का राशि परिवर्तन होता है। सूर्य बारह राशियों में भ्रमण पूरा करते हैं और फिर से अगला चक्र पूरा करने के लिए पहली राशि मेष में प्रवेश करते हैं। जबकि सूर्य और मंगल दोनों की राशि मेष है और यह अग्नितत्व वाली है इसलिए इनके संयोग से

गर्मी की शुरुआत होती है।

चैत्र नवरात्र से ही सनातन हिन्दू नववर्ष के पंचांग की गणना शुरू होती है। इसी दिन से वर्ष के राजा, मंत्री, सेनापति, वर्षा, कृषि के स्वामी ग्रह का निर्धारण होता है और वर्ष में अन्न, धन, व्यापार और सुख शांति का आँकलन किया जाता है। नवरात्र में देवी और नवग्रहों की पूजा का कारण यह भी है कि ग्रहों की स्थिति पूरे वर्ष अनुकूल रहे और जीवन में खुशहाली बनी रहे।

यदि हम धार्मिक दृष्टि से नवरात्र की बात करें तो इसका भी बहुत महत्व है क्योंकि इसी समय आदिशक्ति जिन्होंने इस पूरी सृष्टि को अपनी माया से ढ़का है और जिनकी शक्ति से सृष्टि का संचालन हो रहा है। जो भोग और मोक्ष देने वाली देवी हैं वह पृथ्वी पर होती है इसलिए इनकी पूजा और आराधना से इच्छित फल की प्राप्ति अन्य दिनों की अपेक्षा जल्दी होती है।

जहां तक बात है चैत्र नवरात्र की तो धार्मिक दृष्टि से भी यह अत्यधिक प्रभावशाली और ऐतिहासिक है। बहुत से पौराणिक कथाओं में इसके विषय में उल्लेख मिलते हैं। इसी पावन पवित्र चैत्र नवरात्र के पहले दिन आदिशक्ति प्रकट हुई थी और देवी के कहने पर ब्रह्मा जी ने सृष्टि निर्माण का काम शुरु किया था।

इसलिए चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से हिन्दू नववर्ष आरम्भ होता है। चैत्र नवरात्र के तीसरे दिन भगवान् विष्णु ने मत्स्य रूप में पहला अवतार लेकर पृथ्वी की स्थापना की थी। इसके बाद भगवान् विष्णु का सातवां अवतार जो भगवान् राम का है वह भी चैत्र नवरात्र में हुआ था। इसलिए धार्मिक दृष्टि से चैत्र नवरात्र का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है।

हमारी सार्वभौम संस्कृति में नवरात्र महापर्व का विशेष महत्व केवल धर्म, अध्यात्म और ज्योतिष की दृष्टि से ही नहीं है बल्कि वैज्ञानिक दृष्टि से भी बहुत महत्व है। ऋतु बदलते समय बहुत से रोग उत्पन्न होते है जिन्हें हम आसुरी शक्ति भी कहते हैं उनका नाश करने के लिए हवन, पूजन किया जाता है। इसमें बहुत सी जड़ी, बूटियों और वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता है। हमारे ऋषि मुनियों ने न सिर्फ धार्मिक दृष्टि को ध्यान में रखकर नवरात्र में व्रत और हवन-पूजन करने के लिए बताया होगा बल्कि इसका वैज्ञानिक आधार को भी अधिक महत्व दिया है।

नवरात्र के अवसर पर व्रत और हवन पूजन स्वास्थ्य के लिए बहुत ही लाभदायक है। इसका कारण यह है कि चारों नवरात्र ऋतुओं के संधिकाल में होते हैं यानी इस समय मौसम में बदलाव होता है जिससे शारीरिक और मानसिक बल की कमी भी प्रतीत होती है। शरीर और मन को पुष्ट और स्वस्थ बनाकर नए मौसम के लिए तैयार करने के लिए व्रत करने की प्रक्रिया को बहुत गहन अध्ययन और चिन्तन के उपरान्त हमारे ऋषियों ने शोध करके लाया है। तभी से इस अवसर पर लोग अपनी आध्यात्मिक

और मानसिक शक्तिसंचय करने के लिए अनेक प्रकार के व्रत, संयम, नियम, यज्ञ, भजन, पूजन, योग-साधना आदि करते हैं। कुछ साधक इन रात्रियों में पूरी रात पद्मासन या सिद्धासन में बैठकर आंतरिक त्राटक या बीज मंत्रों के जाप द्वारा विशेष सिद्धियां प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

अध्यात्म पथ पर प्रगतिशील साधकों के लिए नवरात्र के त्यौहार की अनुपम महिमा है।

वर्ष में एक बार शिवरात्रि महापर्व साधकों के लिए साधना में प्रवेश करने का काल है तो वहीं नवरात्र उत्सवपूर्ण नवीनीकरण के लिए नौ रात्रियां हैं।

नवरात्र व्रत का मूल उद्देश्य है इंद्रियों का संयम और आध्यात्मिक शक्ति का संचय। वस्तुतः नवरात्र अंतःशुद्धि का महापर्व है। आज वातावरण में चारों तरफ विचारों का प्रदूषण हो गया है। ऐसी स्थिति में नवरात्र का महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है। अपने भीतर की ऊर्जा जगाना ही देवी उपासना का मुख्य प्रयोजन है। चैत्र नवरात्र के समय में तो वसंत ही होता है। प्रकृति की शोभा देखते ही बनती है। इस समय वनस्पतियां भी नवीन पल्लव धारण करती हैं। प्रकृति का उल्लास अपना प्रभाव समस्त वातावरण पर डालती है। जीवधारियों के मन विशेष प्रकार की मादकता से भर जाते हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से मनीषियों ने इन दिनों आत्मा के ऋतुमति होने का आलंकारिक संकेत किया है। उनके अनुसार, इन दिनों वह अपने प्रियतम परमात्मा से मिलने के लिए विशेष रूप से आतुर होती है। नौ दिन का व्रत-उपवास प्राकृतिक उपचार के समतुल्य माना जा सकता है। इसमें प्रायश्चित के निष्कासन और पवित्रता की अवधारणा दोनों भाव समाहित हैं।

नवरात्र में व्रत का विशेष उद्देश्य है। उस समय प्रकृति में एक विशिष्ट ऊर्जा होती है, जिसको आत्मसात कर लेने पर व्यक्ति का कल्याण हो जाता है। व्रत में हम कई वस्तुओं का त्याग करते हैं और कई वस्तुओं को अपनाते हैं। आयुर्वेद की भी यही धारणा है कि पाचन क्रिया की खराबी से ही शारीरिक अनेक प्रकार के रोग होते हैं क्योंकि हमारे भोजन के साथ जहरीले तत्व भी शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। आयुर्वेद में तो व्रत के विषय में वर्णन मिलता है कि व्रत से पाचन प्रणाली ठीक होती है। व्रत, उपवास का प्रयोजन भी यह है कि हम अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण कर अपने मन-मस्तिष्क को केंद्रित कर सकें। मनोविज्ञान भी यह कहता है कि कोई भी व्यक्ति व्रत-उपवास एक शुद्ध भावना के साथ रखता है तो उस समय उसकी सोच सकारात्मक रहती है, जिसका प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है, जिससे हम अपने भीतर नई ऊर्जा का अनुभव करते हैं। इस ऊर्जा का सकारात्मक उपयोग करने के लिए हमें व्रतों का संयम-नियम बहुत लाभ पहुंचाता है। नवरात्र में कृषि-संस्कृति को भी सम्मान दिया गया है। मान्यता है कि सृष्टि की शुरुआत में पहली फसल जौ ही थी जिसे हम प्रकृति मां परम्बा जगदम्बा को समर्पित करते हैं। ■

श्री गोरखनाथ मन्दिर के प्रकाशन

1. गोरखदर्शन	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	150.00
2. महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति ग्रन्थ	डॉ. भागवती प्रसाद सिंह	80.00
3. नाथ योग	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	10.00
4. आदर्श योगी	रघुनाथ शुक्ल	40.00
5. महायोगी गुरु गोरखनाथ एवं उनकी तपस्थली	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
6. गोरखवानी	रामलाल श्रीवास्तव	210.00
7. गोरक्षसिद्धान्त संग्रह	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
8. श्री गोरक्ष वैदिक पूजा पद्धति	वेदाचार्य रामानुज त्रिपाठी	60.00
9. अमनस्क योग	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
10. गोरक्ष पद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
11. विवेक मार्तण्ड	रामलाल श्रीवास्तव	75.00
12. महार्थ मंजरी	रामलाल श्रीवास्तव	80.00
13. गोरखचरित	रामलाल श्रीवास्तव	120.00
14. हठयोग प्रदीपिका	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
15. सिद्धसिद्धान्तपद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	150.00
16. योग रहस्य	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	25.00
17. योग बीज	रामलाल श्रीवास्तव	6.00
18. शाबर चिंतामणि	नित्यानाथ सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ	7.00
19. योगी सम्प्रदाय -नित्यकर्म संचय	महन्त योगी आदित्यनाथ	90.00
20. गोरख चालीसा	श्री गोरखनाथ प्रकाशन	10.00
21. नाथसिद्ध चरितामृत	रामलाल श्रीवास्तव	70.00
22. नाथ पंथ गढ़वाल के परिप्रेक्ष्य में	विष्णुदत्त कुकरेती	270.00
23. अमरकाय महायोगी गोरखनाथ	श्रीमती माया देवी	10.00
24. युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ ने कहा	महन्त योगी आदित्यनाथ	12.00
25. गोरखनाथ और नाथसिद्ध	डॉ. अनुज प्रताप सिंह	230.00
26. गोरखदर्शन	विजय पाल सिंह	40.00
27. तन प्रकाश	श्री श्री 108 योगी चुन्नीनाथ जी	20.00
28. हठयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	150.00
29. योगिक षट्कर्म	महन्त योगी आदित्यनाथ	21.00
30. नाथ सिद्धों का तात्त्विक विवेचन	अनुज प्रताप सिंह	350.00
31. गोरखमहिमा	महेन्द्र नाथ गोस्वामी	30.00
32. सुभाषित त्रिशती	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
33. राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महन्त अवेद्यनाथ (3 खण्ड)	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	1100.00
34. राजयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	150.00
35. Philosophy of Gorakhnath	A-K- Banerjee	175.00
36. An Introduction to Nath-Yoga	A-K- Banerjee	15.00
37. महन्त अवेद्यनाथ स्मृति ग्रन्थ	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	500.00
38. योगिराज बाबा गम्भीरनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	500.00
39. योग एवं महायोगी गोरखनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	175.00
40. महायोगी गुरु श्रीगोरखनाथ	-	40.00
41. श्रीगोरखनाथ मन्दिर एवं गोरखपुर का इतिहास	-	40.00
42. योगिराज बाबा गम्भीरनाथ	-	40.00
43. युगद्रष्टा महन्त दिग्विजयनाथ	-	50.00
44. राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ	-	50.00
45. गोरखनाथ एवं उनका हिन्दी साहित्य	डॉ. कमल सिंह	175.00
46. गोरखनाथ एवं उनका भाषा अध्ययन	डॉ. उमल सिंह	195.00
47. गोरखनाथ हिन्दी के प्रथम कवि	डॉ. कमल सिंह	95.00
48. Experience of truth seeker	योगीशान्तिनाथ	50.00

ए.पी./जी.आर-125/14 ए.पी./29075/76

मस्तिष्क को शक्ति देता है केला

केला फल ही नहीं रोगों से लड़ने वाला योद्धा है। इससे मस्तिष्क को सेरोटोनिन मिलती है। मानसिक रूप से परेशान व्यक्तियों के मस्तिष्क में सेरोटोनिन की कमी होती है। केले में यह कमी पूरी करने की अद्‌भुत क्षमता है।

केला मोटापा नहीं बढ़ाता। केले में सोडियम बहुत कम होता है तथा कोलेस्ट्रोल बिलकुल नहीं होता। अत: डाइटिंग करने वाले इसका सेवन कर सकते हैं।

केले में आवश्यक पोटैशियम होता है जो उच्च रक्तचाप के नियन्त्रण में तथा कई तरह के हृदय रोगों में फायदेमंद रहता है। केला आँतों की सड़न रोकता है। केले का कैल्शियम आँतों की सफाई करने में अत्यन्त प्रभावी भूमिका निभाता है।

केले का नियमित सेवन अनिद्रा और कब्ज दूर करके पेशाब की जलन मिटाता है। यह अतिसार, आँत और कुष्ठ तथा हृदयरोगियों के लिये प्राकृतिक औषधि है। यह आसानी से पच जाता है, अत: वायु-विकार उत्पन्न नहीं करता। केला शीतल, पौष्टिक, बलवर्धक, कान्तिवर्धक, मधुर, स्निग्ध, वातपित्तनाशक और कफकारक रहता है। यह तृष्णा एवं दाह का नाश करता है।

केला पौष्टिक तत्त्वों से भरपूर रहता है। हरे केले में स्टार्च काफी मात्रा (६४ से ७४ प्रतिशत) में तथा शर्करा कम (२ प्रतिशत) रहती है, परंतु पकनेपर स्टार्च शर्करा (७ से २५ प्रतिशततक) में बदल जाती है।

पके केले की विशिष्ट खुशबू उसमें उपस्थित एमाइल एसीटेट के कारण रहती है। कच्चा केला क्लोरोफिल के कारण हरा रहता है, परंतु पकने पर एंजाइमों की क्रिया से जैथोफिल तथा केरोटिन नामक पीले रसायनों में बदल जाता है।

पके केले में ७० प्रतिशत पानी, १.२ प्रतिशत प्रोटीन, ०.२ प्रतिशत वसा, २२-२५ प्रतिशत शर्करा तथा १ प्रतिशत रेशा रहता है। इसमें कैल्सियम १७मिलीग्राम, फास्फोरस ३६ मिलीग्राम तथा लोहा ०.९ मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम में रहता है। इसमें विटामिन 'ए' ४३० मिलीग्राम, थायमिन ०.०९ मिलीग्राम, राइबोफ्लेविन ०. ०६ मिलीग्राम, नायसिन ०.६ मिलीग्राम तथा विटामिन 'सी' १० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम में रहता है। सौ ग्राम केला ९९ कैलोरी ऊर्जा देता है।

केले के छिलके के नीचे विटामिन होते हैं, जो केले के पकने पर उसके गूदे में चले जाते हैं तथा छिलका पतला और चित्तीदार हो जाता है।

पका केला ठंडा, रुचिकर, मीठा, सुस्वादु, पुष्टिकारक, रक्तविकारनाशक, पथरी, रक्तपित्त दूर करने वाला, प्रदर एवं नेत्ररोग मिटाने वाला होता है।

केले में फास्फोरस ज्यादा रहता है, जो मन-मस्तिष्क को शक्ति प्रदान करता है।

केले में पैक्टिन नामक एक पदार्थ रहता है जो मल को मुलायम बनाकर पेट की सफाई करता है।

केले के छिलके के अंदर वाला पतला मुलायम रेशा कब्ज दूर करके आँतों को ठीक रखता है।

केला क्षारधर्मी फल होने के कारण खूनक अम्लता को दूर करके क्षारीयता बढ़ाता है।

केले के सेवन से बच्चों का वजन जल्दी बढ़ता है

कमजोर व्यक्तियों की पाचनशक्ति ठीक होती है। भूख ज्यादा लगने से वे जल्दी हृष्ट-पुष्ट बनाते हैं।

बच्चों को दूध के साथ केला खिलाने से यह स्वास्थ्यवर्धक, पुष्टिकारक तथा सुपाच्य रहता है। इसे थोड़ा शहद मिलाकर खिलाया जाय तो संक्रामक रोग से बचाव होता है।

सुबह नाश्ते में केला खाकर दूध पीना एक संतुलित तथा सम्पूर्ण आहार है। इसके सेवन से पित्त विकार दूर होते हैं।

केला उच्च रक्तचाप के नियन्त्रण में सहायक है। यह हृदयरोग, अतिसार और आँखों के लिये प्राकृतिक औषधि है।

स्कर्वी रोग में पके केले का नित्य सेवन राम बाण औषधि है। यह अंतड़ियों में विजातीय पदार्थों को रोकता है।

दही के साथ केले के सेवन से दस्त बंद हो जाता है तथा यह आँतों के प्रवाह में आराम दिलाता है। आँत के रोगों को केला बिना ऑपरेशन ठीक कर देता है।

यह एकमात्र फल है जो पेट के जख्म के रोगियों को दिया जा सकता है। यह पेट का अल्सर भी दूर करता है।

(डॉ० श्रीप्रमोदकुमारजी सोनी)

साभार आरोग्य अंक कल्याण पत्रिका

प्रकाशक :

गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर-२७३०१५

web: www.gorakhnathmandir.in | E-mail: gorakhnathmandir@yahoo.com

दूरभाष: (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४, फैक्स: ०५५१-२२५५४५५